खण्ड

2

आधुनिक भारतीय भाषाएँ एवं पारस्परिक अनुवाद

इकाई 5	अनुवाद के सन्दर्भ में आधुनिक भारतीय भाषाओं का परिचय	55
इकाई 6	आधुनिक भारतीय भाषाओं के बीच साम्य एवं वैषम्य	69
इकाई 7	आधुनिक भारतीय भाषाएँ तथा अनुवाद की पद्धतियाँ	83

खण्ड 2 का परिचय

प्रस्तुत पाठ्यक्रम का खण्ड दो **आधुनिक भारतीय भाषाएँ एवं पारस्परिक अनुवाद** है। प्रस्तुत खण्ड में कुल इकाइयों की संख्या तीन है। नीचे उनका संक्षिप्त विवरण दिया जा रहा है:

इकाई 5 का शीर्षक है **अनुवाद के संदर्भ में आधुनिक भारतीय भाषाओं का परिचय**। प्रस्तुत इकाई में आधुनिक भारतीय भाषाओं के उद्भव, उनके विकास तथा उनमें लिखित श्रेष्ठ साहित्य के विषय में बताया गया है। जैसा कि हम जानते हैं कि आधुनिक भारतीय भाषाओं के उदय का समय 8वीं-9वीं शताब्दी है। इन भाषाओं के उदय के पीछे कौन से महत्वपूर्ण कारक रहे, इसकी विस्तृत चर्चा प्रस्तुत इकाई में की गई है।

इकाई 6 का शीर्षक है **आधुनिक भारतीय भाषाओं के बीच साम्य एवं वैषम्य**। भारत एक बहुभाषिक एवं बहुसांस्कृतिक देश है जहां एकाधिक भाषा परिवारों की भाषाएं बोली जाती हैं। जैसा कि हम सभी जानते हैं कि एक भाषा परिवार के अंतर्गत आने वाली भाषाओं में कुछ समानताएं होती हैं। इसी तरह उनमें कुछ विषमताएं भी होती हैं। प्रस्तुत अध्याय में इन भाषा परिवारों में पाई जाने वाली इन्हीं समानताओं एवं असमानताओं की पड़ताल की गई है।

इकाई 7 का शीर्षक है **आधुनिक भारतीय भाषाएं तथा अनुवाद की पद्धतियां**। इस इकाई में हमने उन प्रमुख सिद्धांतों की चर्चा की है जिनका किसी भी मूलपाठ, विशेषकर साहित्य पाठ का एक आधुनिक भारतीय भाषा से दूसरे में अनुवाद करते समय ध्यान में रखा जाता है। इस इकाई में अनुवाद पद्धतियों या अनुवाद की रणनीतियों पर चर्चा से आपको भारतीय साहित्य एवं भूमण्डलीय साहित्य में अनुवाद प्रक्रिया को भी समझने में मदद मिलेगी।

इकाई 5 अनुवाद के सन्दर्भ में आधुनिक भारतीय भाषाओं का परिचय

इकाई की रूपरेखा

5.0 उद्देश्य

5.1 प्रस्तावना

5.2 अनुवाद के सन्दर्भ में आधुनिक भारतीय भाषाओं का विकास

5.3 सारांश

5.4 अभ्यास के लिए प्रश्न

5.5 शब्द सूची

5.6 कुछ उपयोगी पुस्तकें

5.0 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के बाद आप :

- आधुनिक भारतीय भाषाओं के विकास और उसके मुख्य चरणों को जान सकेंगे;
- आधुनिक भारतीय भाषाओं के उद्‌गम के सांस्कृतिक-सामाजिक-राजनीतिक उत्स समझ सकेंगे;
- आधुनिक भारतीय भाषाओं को जोड़नेवाले अंतःसूत्रों को जान सकेंगे और यह भी जान सकेंगे कि कैसे इनके माध्यम से भारतीय साहित्य ने सामाजिक-सांस्कृतिक एकता को कायम रखने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की है; और
- आधुनिक भारतीय भाषाओं के विकास में मौलिक और अनूदित साहित्य के योगदान को समझ सकेंगे।

5.1 प्रस्तावना

भारतवर्ष अनेक भाषाओं का विशाल देश है। तमिल और उर्दू को छोड़ दें तो लगभग सभी आधुनिक भारतीय भाषाओं का विकास कमोबेश एक हजार ई. के आसपास से माना जाता है। सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि इन भारतीय भाषाओं में तात्त्विक रूप से अविच्छिन्न एकता देखने को मिलती है। स्थूल रूप से इन साहित्यों में बहुलतावादी भारतीय संस्कृतियों, भौगोलिक विभिन्नताओं और इतिहासों का समुच्चय देखने को मिलता है। भारतीय समाज की ऐतिहासिक परम्परा, सांस्कृतिक मूल्य और काव्य संवेदना समानधर्मी हैं और उसके द्वारा रचित साहित्यिक कृतियों में भावबोध और शिल्पगत विन्यास की प्रकृति भी कमोबेश एक है। बहुजातीयता, बहुसांस्कृतिकता और बहुभाषिकता ने साहित्यिक-सामाजिक-सांस्कृतिक मूल्यों और स्थापनाओं का क्षरण नहीं किया है। उनकी आंतरिकता और सामूहिक चेतना का निर्माण भारतीय संस्कृति के उत्कृष्ट मूल्यों व साहित्यों ने किया है। सहस्त्राब्दियों से संचित अनुभूतियों और विचारों ने उनके मानस और भावबोध का निर्माण किया है, इसलिए वे आंतरिक रूप से जुड़े हुए हैं। इसका एक कारण उनके उद्‌गम् स्त्रोतों का लगभग एक होना रहा है। जैसे – संस्कृत महाकाव्य, मिथकेतिहास, रामायण, महाभारत, भागवत, पुराण, पालि, प्राकृत, अपभ्रंश, जैन-बौद्ध साहित्य, उपनिषद, स्मृतियां और प्राचीन संस्कृत काव्यशास्त्र आदि ही आधुनिक भारतीय भाषाओं के मूल उपजीव्य रहे हैं। प्रभाव ग्रहण के बावजूद सभी भारतीय भाषाओं का अपना स्वतंत्र महत्व और अस्तित्व है। सबके भीतर अपना प्रखर वैशिष्ट्य और ठाट है। जैसे तमिल का संगम साहित्य, मलयालम का संदेश काव्य, मराठी के पवाड़े, गुजराती के आख्यान, बंगला का मंगलकाव्य, असमिया के बड्डगीत, पंजाबी के वीरगीत, उर्दू की गजल और हिन्दी का रीतिकाव्य और छायावादी काव्य आदि।

आधुनिक भारतीय भाषाओं के विकास के अध्ययन के दौरान हम पाते हैं कि लगभग सभी भारतीय भाषाओं की शुरुआती रचनाएं अनूदित हैं। उदाहरण के तौर पर तेलुगु में नन्नय का "महाभारत", कन्नड़ में नृपतुंग का "कविराजमार्ग" तथा मलयालम का रामचरितम् (रामकर्मा) प्रथम उपलब्ध रचनाएं हैं, जो मूलतः अनुवाद हैं। कमोबेश यही बातें अन्य भाषाओं पर भी लागू होती हैं। ज्यादातर रचनाएं - वैदिक आख्यान, रामायण, महाभारत, भागवत, पुराण, उपनिषद, पौराणिक मिथकेतिहास, लोक आख्यान और फंतासियों का आधार लेकर खड़ी हुई हैं। यही कारण है कि तमिल में कम्ब रामायण, तेलुगु में रंगनाथ रामायण, कन्नड़ में पम्प रामायण, मलयालम में अध्यात्म रामायण, मराठी में मोरोपंत की रामकथा, बंगला में कृतिवास रामायण, असमिया में माधव कंदलीकी रामायण, ओड़िया में विलंका रामायण और हिन्दी में तुलसी रामायण आदि देखने-पढ़ने को मिलती हैं। ये सब रचनाएं रामकथा के हैं। वैविध्यपूर्ण भावानुवाद, कथांतरण, रूपांतरण हैं। चूंकि इन रचनाओं में लेखकों की अपनी मौलिकता, समसामयिकता, विचार, विश्वदृष्टि, भाषायी अस्मिता, वैविध्य और बहुलता आदि शामिल रही हैं, इसलिए इन्हें पुनःसृजन कहना समीचीन है। भाषा और साहित्य का विकास एक-दूसरे के पूरक रूप में विकसित होता रहा है।

5.2 अनुवाद के सन्दर्भ में आधुनिक भारतीय भाषाओं का विकास

अब यहां हम अलग-अलग आधुनिक भारतीय भाषाओं की विकास यात्रा को समझेंगे :

तमिल साहित्य

तमिल साहित्य का इतिहास लगभग पच्चीस शताब्दी पुराना है। संस्कृत की तरह ही यह सबसे प्राचीन द्रविड़ परिवार की प्रमुख भारतीय भाषा है। इसकी गिनती सबसे सम्पन्न भाषाओं में की जाती है। तमिल का प्राचीनतम उपलब्ध साहित्य 'संगम साहित्य' कहा जाता है और इसका समय प्रायः 500 ई.पू. से 200 ई.पू. तक माना जाता है। विद्वानों ने इस संकलन को मोटे तौर पर दो भागों में विभक्त किया है। पहला, 'अखम्' जिसमें प्रेम का प्रतिपादन है और दूसरा, 'पुरम्' जिसमें युद्धों, शासकों तथा उसके चरित्रों का वर्णन है। इन कवियों ने काव्यरूढ़ियों का जबरदस्त उपयोग किया है। ये काव्य प्रकृति, प्रेम और श्रृंगार वर्णन से लबरेज हैं। इस परम्परा का उल्लेख प्राचीन उपलब्ध ग्रंथ 'तोलकाप्पियम्' में किया गया है।

संगम साहित्योत्तर काल की प्रमुख रचनाओं में तिरुक्कुरल नीतिविषयक पुस्तकों में बेहद प्रसिद्ध है। नालडियार में जैन कवियों की रचनाएं संकलित है। रेवरेंड डॉ. जी. यू. पोप ने इन दोनों पुस्तकों का अंग्रेजी में अनुवाद किया है। इस वर्ग की अन्य कृतियों में नान्मणि कडिकै, सिरुपंचलम्, तिरुकडुक, इनियवै, नारपटु आदि हैं। शिप्पदिकारम् (लेखक-इलंगो अडिगल) और मणिमेखलै (लेखक-छात्तनार) महाकाव्यों को रामायण और महाभारत या इलियट और ओडिसी सरीखे दर्जा प्राप्त हैं।

छठी शताब्दी ई. के बाद तमिल साहित्य में नये युग का सूत्रपात हुआ। शैव नायनमारों और वैष्णव आलवारों ने भारत में भक्ति आंदोलन के सूत्रपात का काम किया। न सिर्फ हिन्दी साहित्य पर बल्कि भारत की सभी भाषाओं के साहित्य पर इसका गहरा प्रभाव पड़ा। इस युग में पुराने राज्यों का पतन हुआ और पल्लव राजा का उदय हुआ जिसने संस्कृत साहित्य को संरक्षण प्रदान किया जिसकी वजह से संस्कृत रचनाओं का तमिल में अनुवाद शुरू हुआ। तिरुज्ञानसम्बन्धर, तिरुनावक्करसर, सुन्दर और मनिक्यवाचगर शैव आचार्य थे जिन्हें 'नायनमार' कहा जाता है। पोइगै आलवार, पूदत्तालयार, पेयालवार, तिरुमलिसै आलवार, तिरुप्पन आलवार, टोंडरडिप्पडि आलवार, तिरुमंगै आलवार, कुलशेखर आलवार, पेरियालवार, आंडाल, नम्मालवार और मधुर कवि आलवार वैष्णव आलवार भक्त थे। इनके उपलब्ध पदों का संकलन नाथमुनि ने किया था। इसे भक्ति आंदोलन का आदिग्रंथ माना जाता है।

नायनमारों और आलवारों ने सामंती शासन व्यवस्था का विरोध किया। इन्होंने आम जनता में भक्ति के मार्ग को प्रशस्त किया। कर्म और ईश्वर के बीच तालमेल बैठाने का काम इन्होंने ही पहली बार किया। जाति और वर्ण-व्यवस्था का इन्होंने जबरदस्त विरोध किया। धर्म, ईश्वर और भक्ति पर ब्राह्मणों के एकाधिकार को चुनौती दी और निम्न वर्ग तथा स्त्रियों तक भक्ति को सुलभ कराया। उन्होंने भगवान से भय का सम्बन्ध मिटाकर प्रेम के सम्बन्ध की नई दुनिया लोगों के सामने रखी। इन्होंने समाज के पुनर्गठन पर बल दिया और समानता का भाव सामने रखा। इन संतकवियों ने विष्णु के अवतार राम और कृष्ण के भक्ति के गीत गाए।

इस दौर में जैन और बौद्ध काव्य भी लिखे गये। 'जीवक चिंतामणि' जैन कवि द्वारा लिखा गया महाकाव्य है जिसका मूल आधार संस्कृत ग्रंथ 'क्षेत्रा चूडामणि' है। अन्य महत्वपूर्ण रचनाओं में वलैयापति, नागकुमारकावियम् और वामनाचार्य द्वारा रचित मेरुमंतिर पुराणम् है।

तमिल की अमर कृति 'कम्ब रामायण' के रचयिता कम्बन हैं। इन्होंने 'बाल्मीकि रामायण' से कथा ग्रहण की है। यद्यपि इसकी मौलिकता अक्षुण्ण है। 1200 ई. के बाद तमिल में संस्कृत के कुछ पुराणों का अनुवाद और कुछ का रूपांतर किया गया। 'काशीकांडम' और 'कूर्म पुराणम्' संस्कृत पुराणों के अनुवाद हैं। अराकेशरियर ने कालिदास के 'रघुवंशम्' का तमिल में अनुवाद किया है। 'कंदपुराणम्' संस्कृत की 'शिवशंकर संहिता' पर आधारित है। वडमलैयेप्पपिल्लैयान का 'मच्छपुराणम्' संस्कृत के 'मत्स्यपुराण' का स्वतंत्र रूपांतरण है। मीनाक्षी सुंदरम् पिल्लै का 'तिरुन्नागैक्कारोन पुराणम्' संस्कृत ग्रंथ का ही भाषांतरण है।

सामंतवाद, साम्राज्यवाद, उपनिवेशवाद, जाति-वर्णवाद, सामाजिक-धार्मिक-सांस्कृतिक रूढ़ियों के विरुद्ध उपजी चेतना के साथ ही नवजागरण और आधुनिकता की शुरुआत हुई। पूर्व और पश्चिम की टकराहट से नये साहित्य और विधाओं का जन्म हुआ। परम्परागत काव्यविषयों, रूढ़ियों, छंदों और भाषा को त्याग कर साहित्य नई चेतना और बौद्धिकता से समृद्ध हुआ। गद्य के नये-नये रूपों का जन्म और विस्तार हुआ। तमिल में आधुनिक चेतना के वाहक के रूप में सुब्रह्मण्यम् भारती का नाम लिया जाता है। हालांकि उनसे पूर्व रामलिंग अहडिल तथा गोपाल कृष्ण भारती ने सामान्य जन को सामंती शासन से मुक्ति का रास्ता दिखाया था। सुब्रह्मण्यम भारती ने आर्थिक शोषण, उत्पीड़न, एवं शोषितों के कष्टपूर्ण जीवन का मार्मिक चित्रण प्रस्तुत किया है। अपनी रचनाओं द्वारा उन्होंने राष्ट्रीय आंदोलन को आवाज दी। मानव मुक्ति की गाथा लिखी। वंचित समूहों की अभिव्यक्ति को महाकाव्यात्मक औदात्य के साथ प्रस्तुत किया। भारतनाडु, सुततिरम्म्, पिरंनाडुहल का मूल स्वर राष्ट्रीय स्वतंत्राता और क्रांति का उद्घोष है। उनके महत्वपूर्ण काव्य संग्रह-कण्णनपाट्टु, कन्ननपाट्टु, कुयिलपाट्टु, पांचाली शपथ आदि हैं। इलम तेवन ने रविन्द्रनाथ टैगोर की रचना 'गीतांजलि' का अनुवाद 'गीतांजलि कीर्तनैकल' नाम से किया है। वे. आर. एम. चेट्टियार, अरंग श्रीनिवास आदि ने टैगोर की अनेक रचनाओं का अनुवाद कर तमिल साहित्य को समृद्ध किया है। इन्होंने जयशंकर प्रसाद की प्रसिद्ध हिन्दी रचना 'कामायनी' का अनुवाद 'कामनमकल' (कामदेव की पुत्री) नाम से किया है। कालिदास की 'मेघसन्देशम्' का रूपांतरण तमिल में किया है।

पी. सुन्दरम पिल्लै ने तमिल नाटक 'मनोनमनियम' लिखा है। वी. जी. सूर्यनारायण शास्त्रियर ने शेक्सपीयर की तर्ज पर रूपावती, कलावती, मानविजयम् लिखी है। उनके सॉनेट 'तनिप्पाट्टुतुगै' का अनुवाद डॉ. जी. यू पोप ने अंग्रेजी में किया है। इनकी रचना 'तमिल मोलियिन वरलास' को तमिल भाषा का श्रेष्ठ इतिहास माना जाता है। तमिल साहित्य के प्रसिद्ध आलोचक वेदाचलम् ने कालिदास के 'अभिज्ञान शाकुंतलम्' का अनूठा अनुवाद किया है। वी.वी. एस. अय्यर ने 'तिरुक्कुरल' का अंग्रेजी अनुवाद किया है। देशिगविनयम पिल्लै को कविताओं के अनुवाद में सिद्धहस्त माना जाता है। उमर खैयाम और अर्नाल्ड की 'लाइट आव एशिया' का रूपांतरण बहुपठित और चर्चित है। अनेक अंग्रेजी काव्यकृतियों का तमिल में अनुवाद कर अनुवाद परम्परा को सुदृढ़ करने में इनका बहुत बड़ा योगदान रहा है। काव्य के क्षेत्र में अचलांबिके अम्मैयार, नानल, सोमू, बालभारती, तूरन, वाणीदास, के.एम. सुब्रह्मण्यम, कृष्णदासन, त्रिलोक सीताराम, भास्करन, करुणानिधि, के.वी. जगन्नाथन, अकलन आदि प्रमुख हस्ताक्षर हैं।

वेदनायक पिल्लई को 'उपन्यास विधा' का जनक माना जाता है। पहला तमिल उपन्यास 'प्रताप मुदलियर चरित्रम्' है जो सन् 1879 में इनके द्वारा लिखा गया। बी.आर. राजम अय्यर का 'कमला बालचरित्रम्', माधवैय्या का 'पदमावती चरित्रम्', नरेश पंडित का 'कोमलम् कुमारि' वेंकटरमणी के 'एक शक', कृष्णमूर्ति के 'त्यागभूमि', मकुटपति, अलैऔसै, पातिर्पन कनवु की ख्याति निर्विवाद है। इस दौरान अनेक विदेशी उपन्यासों का छायानुवाद और बंकिम की रचनाओं का भी अनुवाद किया गया। कहानियों के प्रवर्तक ए. माधवैय्या हैं। राजगोपालाचारी, जानकीरामन, पिच्चमूर्ति, रामामृदम्, रघुनाथन, विंदन, टी.एन. कुमारस्वामी, कुमुदिनी, गुहप्रिया, पुष्पा महादेवन आदि महत्वपूर्ण कहानीकार हैं।

तेलुगु साहित्य

तेलुगु का प्रारंभ ही अनूदित साहित्य से हुआ। नन्नय का 'महाभारत' तेलुगु का आदिग्रंथ है जो व्यास रचित 'महाभारत' का रूपांतरण है। लेकिन नन्नय इसे पूरा नहीं कर पाए। उनकी मृत्यु के बाद तिक्कना और एर्रना ने इसे पूरा किया। कवित्रयी को ही आदिग्रंथ के प्रवर्तन का श्रेय जाता है। नन्नय ने महाभारत की रचना द्वारा जैन धर्म और अवैदिक संस्कृतियों का तीव्र विरोध किया था। उसका उद्देश्य वैदिक धर्म को प्रचारित-प्रसारित करना था। एर्रना के अन्य ग्रंथ 'नृसिंह पुराण' और 'हरिवंश' हैं। नन्नेचोड का 'कुमारसंभव' विशाल काव्यग्रंथ है। सोमनाथ कृत 'पंडिताध्यचरित्र' विविध ज्ञान का भंडार है, जिसमें सामाजिक प्रथाओं, परम्पराओं, घरेलू समस्याओं, कला, शिल्प एवं रागों तथा तालों के नाम के साथ संगीत का परिचय दिया गया है।

तेलुगु में अन्य स्थानों की तुलना में रामकाव्य अधिक लोकप्रिय रहा है। तेलुगु में रामायण पर आधारित छोटी-बड़ी डेढ़-दो सौ काव्य रचनाएं और उससे अधिक गद्य रचनाएं उपलब्ध हैं। तेलुगु की प्राचीनतम रामायण 'रंगनाथ रामायण' नाम से प्रसिद्ध है। इसके रचयिता गोन बुद्धा रेड्डि है। 'भास्कर रामायण' की रचना भिन्न-भिन्न लेखकों ने की है। इसलिए इसकी भाषा और शैली भी भिन्न है। भास्कर की रचना 'अरण्यकांड' सर्वोत्तम है। यूं तो 'भास्कर रामायण' कालजयी कृति है। मारन मंत्री ने 'मार्कण्डेय पुराण' का तेलुगु रूपांतरण किया है। कवि नाचन सोमना ने हरिवंश पुराण का रूपांतरण 'उत्तरहरिवंशम्' के रूप में किया है। श्रीनाथ, पुराणों के अनुवाद के समय हुए थे, अतः उन्होंने भी पुराणों का अनुवाद किया। भीमेशेवर पुराणम् काशीकंडम् हरविलासम् और नैशद्य उनकी महत्वपूर्ण रचनाएं हैं। 'शृंगार नैशधम्' तेलुगु के महत्वपूर्ण पंचमहाकाव्यों में से एक है। श्रीनाथ का 'क्रीड़ाभिरामम्' और 'पलनाटि वीरचरित्रम्' भी उत्कृष्ट रचना है। शिवभक्त पोतना ने संस्कृत भागवत का अनुवाद तेलुगु में किया है।

प्रबंधयुग मध्यकालीन तेलुगु साहित्य में स्वर्णयुग माना जाता है। प्रबंधकाव्य का प्रारंभ विजय नगर के सम्राट कृष्णदेव राय और उनके दरबारी कवियों के साथ होता है। कृष्णदेव राय की कोई रचना अब उपलब्ध नहीं है लेकिन अष्ट दिग्गजों में अल्लासानि पेद्दना का 'मनुचरित्र' पंचमहाकाव्यों में शामिल है। यह 'मार्कण्डेय पुराण' के एक आख्यान पर आधारित है। इस दरबार के कवि नंदि तिम्मना ने 'हरिवंश पुराण' के उपख्यान को आधार बनाकर रचना की है। रामभद्र का 'रामाभ्युदयम्' रामभक्ति से सम्बन्धित काव्य है। पिंगली सूरना तेलुगु के महत्वपूर्ण कवियों में शुमार किये जाते हैं। उनकी रचना 'कलापूर्णोदय' और 'प्रभावती प्रद्युम्नम' है। 'राघव पांडवीयम्' द्वयार्थक काव्य है, जिसमें रामायण और महाभारत की कथाएं वर्णित हैं। भट्टमूर्ति की रचना 'वसुचरित्रा' और 'हरि चंद्र नलोपाख्यानम्' है। तेलुगु कवयित्रियों में मोलाम्बा का नाम आदर से लिया जाता है। वह राम की अनन्य उपासक थीं। रामदास ने 'दाशरथिशतक' नाम से मुक्तक काव्य लिखा। आंध्रप्रदेश में जो भक्ति की धारा प्रवाहित हुई उसमें राम और कृष्ण दोनों को स्वीकार किया गया।

उत्तर मध्ययुग में शृंगार की धारा प्रवाहित हुई। क्षेत्रय्या जैसे कवियों ने इसे ऊंचाई पर पहुंचाया। धूर्जटी न सिंह, तेनालि रामकृष्ण भट्टमूर्ति नंदि तिम्मना आदि ने शृंगारिक रचनाएं भी की हैं। मुद्दपलनि ने 'राधिका स्वातनम्' नामक शृंगार प्रधान काव्य लिखा है। चेमूकर की 'विजयविलाससु' भी इसी कोटि की रचना है। 'सारंगधर चरित्रम्' में लेखक ने कामुक प्रणय शृंगार का वर्णन किया है।

आधुनिक काल में वीरेशलिंगम पुंतलु ने अपनी रचनाओं द्वारा सामाजिक सुधार की दिशा में महत्वपूर्ण पहल की। उनका लक्ष्य ही समाज सुधार था। वे यह काम उसी दौर में कर रहे थे जिस दौर में राजाराममोहन राय, भारतेन्दु आदि कर रहे थे। वीरेशलिंगम, वडडादि सुब्बाराव, सुब्बाराव, वासुदेव शास्त्री, श्रीपाद कृष्णमूर्ति विश्वनाथ सत्यनारायण आदि कवियों ने राष्ट्रीय सांस्कृतिक कविताएं लिखकर अपने सृजन कर्म को नवजागरण और स्वतंत्रता की चेतना से जोड़ दिया। जयंति रामय्या ने बाल्मीकि रामायण का अनुवाद भी किया। कृष्णमूर्ति ने रामायण और भागवत का अनुवाद किया। सत्यनारायण ने 'शृंगारवीथि, तेलुगु ऋतुकुल, शशिइतम' जैसे श्रेष्ठ काव्य रच तेलुगु के साहित्यिक व्यास को चौड़ा किया। रायप्रोलु सुब्बाराव के 'ललिता' और 'नरकंकण' जैसी रचनाओं में नये भावों का संचार हुआ है। इन्होंने उमर खैय्याम की रूबाइयों का 'मधुकलशम्' नाम से अनुवाद भी किया।

कुछ लोग के. वेंकटरत्न पंतुलु के 'महाश्वेता' (1887), के.. नरहरि गोपाल कृष्णम सेट्टी के 'रंगराजुचरित्रा' और वीरेशलिंगम पंतुलु के 'राजशेखर चरित्र' को तेलुगु का प्रथम उपन्यास मानते हैं। 1892 ई. में लिखी पी. अनंतचार्युल

का उपन्यास 'मंजुवाणी विजयम' प्रेमाख्यान है। उन्नीसवीं सदी के उपन्यासकारों में रामचंद्रलु का 'धर्मावतीविलासम' और 'लक्ष्मीसुन्दरम्' प्रसिद्ध है। उन्नव लक्ष्मीनारायण कृत 'मालपल्लि' उपन्यास भारत का प्रतीक है। इसे गांधीयुग का श्रेष्ठ उपन्यास कहा जा सकता है। विश्वनाथ सत्यनारायण और वापिराजु भी तेलुगु के प्रसिद्ध उपन्यासकारों में शामिल हैं। कहानी लेखन की शुरुआत का श्रेय गुरुजाड अप्पाराव को जाता है। लेकिन उसे ऊंचाई देने का श्रेय चिंता दीक्षितुलु को जाता है। सुब्रह्मण्यम शास्त्री, रामकृष्ण शास्त्री, सोमयाजुलु, रामराव, जमदग्निशर्मा, वीना देवी आदि तेलुगु के महत्वपूर्ण कहानीकार हैं।

जहां तक अनुवाद का सवाल है आधुनिक युग में गद्य के विकास के साथ ही अनुवाद की भी लम्बी परम्परा है। संस्कृत, बंगला, अंग्रेजी, मराठी, उर्दू व अन्य भाषाओं से तेलुगु में और तेलुगु से इन भाषाओं में अनुवाद होने लगा। यहां सब का उल्लेख संभव नहीं है लेकिन इतना कहा जा सकता है कि रविन्द्रनाथ ठाकुर, शरतचंद्र और द्विजेन्द्र लाल राय की सभी रचनाओं का अनुवाद हुआ। अंग्रेजी से शेक्सपियर, बर्नाड शॉ, इब्सन रूस के ताल्सताय, गोर्की फ्रांस के रोम्यां रोलां, अनातोले इत्यादि की रचनाएं अनूदित हुईं। हिन्दी से प्रेमचंद, जयशंकर प्रसाद, जैनेन्द्र कुमार, राहुल सांकृत्यायन, यशपाल, भगवती चरण वर्मा, इलाचंद जोशी, अश्क आदि की रचनाएं अनुदित हुईं। तेलुगु के रुप्रमदेवी, नारायण राव, आन्ध्रल सांधिक चरित्रा, कन्याशुल्कमु आदि कृतियों का हिन्दी में अनुवाद हुआ।

कन्नड़ साहित्य

नवीं शताब्दी ई. के पूर्व कन्नड़ का कोई लिखित साहित्य नहीं मिलता है। प्रथम उपलब्ध कृति के तौर पर नृपतुंग द्वारा रचित 'कविराजमार्ग' है जो इसका कविता और काव्यशास्त्र है। गद्य के रूप में शिवकोट्याचार्य द्वारा लिखित 'वड्डाराधने' को प्रथम कृति माना जाता है। कन्नड़ साहित्य का स्वर्णकाल पंपकाल (950-1150 ई.) को कहा जाता है। पंप, पोन्न तथा रत्न इस दौर के 'रत्नत्रायी' कवि हैं।

पंप से ही जैन क्लासिक की शुरुआत होती है। यहीं से साहित्यिक कलात्मकता और औदात्य का भी प्रवेश होता है। इन कवियों ने जैन धर्म सम्बन्धी धार्मिक काव्य और लौकिक काव्य लिखे हैं। धार्मिक काव्य के तौर पर तीर्थंकर या महापुरुषों के चरित का आख्यान रचा गया है और लौकिक काव्य के रूप में वैदिक धर्म से सम्बन्धित पौराणिक काव्यों के कथानकों का चित्रण किया गया है। पंप की दो महत्वपूर्ण रचनाएं आदि पुराण और विक्रमार्जुन विजयम् (पंप भारत) है। पंप भारत में ब्राह्मण संस्कारों को जगह मिली है तो आदि पुराण में जैन धार्मिक मतों को। इसमें वैभव, ऐश्वर्य, यौवन, आयु सौभाग्य सबको क्षण भंगुर साबित किया गया है।

पोन्न की 'शांतिपुराण' महान काव्यकृति है। इसमें सोलहवें तीर्थंकर के चरितमाला के माध्यम से धर्म का निरूपण किया गया है। रत्न ने 'अजित पुराण', 'गदायुद्धम्' नाम से सशक्त नाट्यकृति लिखा है। गदायुद्धम् में चालुक्य राजा सत्याश्रय का महाभारत के भीम से तादात्म्य स्थापित गया है और अजित पुराण में द्वितीय तीर्थंकर के जीवन चरित को शब्दबद्ध किया गया है। नागचंद्र द्वारा लिखा गया 'मल्लिनाथ पुराण' 19वें तीर्थंकर पर है तो 'रामचन्द्रचरितपुराण' में दिखाया गया है कि राम ने जैनदीक्षा ग्रहण की थी और बाद में निर्वाण प्राप्त किया था। दूसरे शब्दों में कहें तो राम का जैनी संस्करण इस पुस्तक में उपलब्ध है। चावुंड के 'चावुंडराय पुराण' में जैन धर्म के चौबीसों तीर्थंकर का चरित आख्यान मौजूद है। इस युग के अन्य लेखकों में नाग वर्मा (छंदोम्बुधि), कोशिराज (शब्द मणिदर्पण), नेमिचंद्र (लीलावती, नेमिनाथ पुराण), रुद्रभट्ट (जगन्नाथ विजय) आदि उल्लेखनीय हैं। इस युग में इन कवियों ने कन्नड़ भाषा और साहित्य को सर्वोच्च शिखर तक पहुंचाया।

12वीं शताब्दी में बसवेश्वर के द्वारा वीरशैववाद का पुनरुत्थान हुआ। यह सामाजिक और धार्मिक आंदोलन था। वसवेश्वर ने विदेशी आक्रांता के विरुद्ध देशवासियों को संगठित किया और लोगों में स्वाभिमान जगाने का काम किया। बसवेश्वर उच्चकोटि के कवि, विचारक और समाज सुधारक थे। उन दिनों 'वचन शैली' का आविर्भाव हुआ। इसमें गद्य गीत थे। इसके माध्यम से सामाजिक रूढ़ियों पर तीखा प्रहार किया गया। देवररासिभट्टैया प्रथम वचनकार हैं। महादेवी अम्मा, सिद्धराम, आयंडविक आदि महत्वपूर्ण संत कवि हैं। होन्नमा को कन्नड़ की प्रथम कवयित्री होने का सौभाग्य प्राप्त है। इन कवियों ने 'आत्मनिष्ठ' गुरु की संकल्पना को मजबूत किया और मानव मुक्ति के मार्ग को प्रशस्त किया।

वैष्णव विचारधारा का प्रचार-प्रसार रामानुजाचार्य और मध्वाचार्य ने क्रमशः राम और कृष्ण की भक्ति के माध्यम से किया। रुद्रभट्ट, नरहरि तीर्थ, श्रीपादराय, पुरंदरदास, वादिराज, कनकदास, विजयदास, गिरियम्मा आदि लेखकों ने वैष्णव भक्ति को व्यापक स्तर पर फैलाया। रुद्रभट्ट ने विष्णुपुराण पर आधारित 'जगन्नाथ विजय' चंपूकाव्य लिखा। नागणप्पा और तिम्पन्ना ने महाभारत का अनुवाद कन्नड़ में किया।

17वीं शताब्दी के बाद कन्नड़ साहित्यिक दुनिया में चुप्पी की स्थिति दिखती है। 20वीं शताब्दी की शुरुआत तीव्र गति से होती है। साहित्य की कई विधाएं एक साथ उभरकर सामने आती हैं। उपन्यास, कहानी, डायरी, शोकांतिका, जीवनी, आत्मकथा, निबंध, गीतिकाव्य देखने को मिलते हैं। महत्वपूर्ण बात यह है कि इन पर पाश्चात्य कवियों-लेखकों शेक्सपियर, मिल्टन, स्कॉट, ऑस्टीन, मैकाले, डिकंस, गोल्डस्मिथ, शेरीडन, इब्सन आदि का स्पष्ट प्रभाव दिखाई पड़ता है। डी.वी. गुंडप्पा, मास्ति वेंकटेश अयंगर, डी.आर. बेन्द्रे, सालि, आनंदकंद, मंगेश्वर आदि की कविताओं में राष्ट्रीय-सांस्कृतिक भावनाओं का मुखर स्वर सुनाई पड़ता है। स्वछंदतावाद, मुक्ति के गीत आसानी से देखे जा सकते हैं। इन्हीं दिनों बी.एम. श्रीकंठय्या ने वर्ड्सवर्थ, शैली आदि कवियों का अनुवाद प्रस्तुत किया। यह अनुवाद 'अंग्रेजी गीत' नाम से प्रकशित हुआ। गोविन्द पै ने उमरखैय्याम की रूबाइयों का भावानुवाद किया। गुंडप्पा 'वसंत', 'कुसुमांजलि' एवं 'निवेदन' जैसे गीतसंग्रह लेकर सामने आए। श्री निवास आयंगर, रंगनाथ, डी.आर. बेन्द्रे आदि के नवीन काव्यों ने युग परिवर्तन का कार्य किया।

एम. एस. पुटण्ण ने सर्वप्रथम सामाजिक उपन्यास के रूप में 'माडिद्दुण्णों मराया' लिखा। वासुदेवाचार्य केरूर ने तीन मौलिक उपन्यासों के अलावा शेक्सपियर के रोमियो एण्ड जूलियट, मर्चेंट ऑव वेनिस का भी अनुवाद किया। उनका प्रसिद्ध उपन्यास 'इंदिरा' है। बाद में शिवराम कारंत और कृष्णराव का उपन्यास लेखन के क्षेत्र में काफी प्रभाव रहा। कारंत ने सामाजिक विषयों पर लिखा। उनका 'चीमनदुडि' दलित चेतना से ओतप्रोत है। कृष्णराव भी दलितों की हिमायत करने वाले लेखक रहे हैं। श्रीरंग का 'अनादि' यौन समस्याओं का निर्भीक चित्रण करने वाला उपन्यास है। रामानुजन का 'मालती मीनू', यू.आर. अनंतमूर्ति का 'संस्कार', यशवंत चित्तल का 'मुरुडेरिगलु', शांतिनाथ देसाई का 'मुक्ति' बेहतरीन उपन्यासों में गिना जाता है। यू. आर. अनंतमूर्ति और देसाई का नाम कहानी के क्षेत्र में भी उतने ही आदर से लिया जाता है। चित्तल ने विद्रोही कहानीकार के तौर पर अपनी पहचान बनाई है।

केरूर वासुदेवाचार्य को प्रथम नाटककार के तौर पर पहचान मिली है। नारायण राव का 'स्त्रीधर्म रहस्य' प्रसिद्ध है। कन्नड़ नाटककारों में गिरीश करनाड, पी. लंकेश, चंद्रशेखर पटेल, चंद्रशेखर कंवर आदि को प्रतिष्ठा हासिल है। गिरीश करनाड के 'तुगलक' और 'हयवदन' का अनुवाद सिर्फ भारतीय भाषाओं में ही नहीं बल्कि कई विदेशी भाषाओं में हो चुका है। रं. रा. दिवाकर ने एम. आर. श्रीनिवासमूर्ति के 'नागरिक' नाटक का अनुवाद किया। कुवेंपु के 'श्मशान कुरुक्षेत्र' और 'रक्ताक्षि' का सुधाकर और हिरण्मय तथा प्रभुशंकर के 'अंगुलिमाला' और 'अंबापाली' का रूपांतर राजेश्वरय्या और बी.पी. चंद्रबाई ने किया है। श्रीरंग के 'केलु जनमेजय' और गिरीश करनाड के 'तुगलक' का अनुवाद बी.वी. कारंत ने किया है।

मलयालम साहित्य

मलयालम प्राचीन तमिल भाषा की शाखा है, जो नवीं सदी के आसपास उससे अलग हो गई। इसमें साहित्य रचना 13वीं सदी से प्रारंभ हुई। आदिकालीन मलयालम साहित्य का उन्मेश लोकगीतों या जनगीतों के रूप में हुआ। भद्रकालिपाट्टु, तियाट्टुपाट्टु, पुल्लुवनपाट्टु आदि महत्वपूर्ण गीत हैं। तोट्टपाट्टु का अर्थ है गाने के लिए हृदय से निकला गीत। 'ओणपाट्टु' ओणम पर गाये जाते हैं। 'शिपाट्टु' किसान गाते हैं।

मलयालम का प्रथम काव्य रामवीर वर्मा का रामचरितम् है, संभवतः जिसका रचनाकाल 13वीं सदी है। यह वीरगीत शैली की रचना है। लेकिन यह तमिल संप्रदाय की रचना है। मध्यकाल में कंचन नम्बियार ने 'परियन तुलमुल' लिखकर सामाजिक विद्रोह की भावना जगाई। उन्होंने सामंत और प्रभूवर्ग पर तीखा व्यंग्य किया। राम पणिक्कर ने 'कण्णष रामायण' की रचना की है। कृष्ण भक्ति साहित्य के प्रमुख कवियों में चेरुशेरी नंबूतिरी, और एषुतच्छन हैं। चेरुशेरी का कृष्णगाथा श्रीमदभागवत् से प्रभावित है। उन्होंने अपने काव्य में शृंगार पर बहुत बल दिया है। एषुतच्छन प्रतिभाशाली कवि थे। उन्होंने राम और कृष्ण दोनों को अपने काव्य का उपजीव्य बनाया है। अध्यात्म रामायण, भागवत, हरिनाम कीर्तन चिंतारत्न आदि उल्लेखनीय रचनाएं हैं। अपनी रचना महाभारत में करुणाभाव,

गांधारी विलाप और दुर्योधन मृत्यु को अविस्मरणीय बना दिया है। 14वीं शताब्दी के बाद मलयालम में चंपूकाव्य काफी लिखे गए, उसमें 'चंपू रामायण' श्रेष्ठ है। उत्तर मध्यकालीन मलयालम काव्य में शृंगार की प्रवृत्ति प्रबल रही।

प्राचीन कवि नंपियार कृत 'तुल्लल' का हिन्दी अनुवाद सदाशिवन नायर ने किया है। 'हरिनामकीर्तनम' का के. एन. मेनन, एषुत्तच्छन के 'अध्यात्म रामायण' का कुट्टन पिल्लै तथा ए.एस. अय्यर ने महाभारत का हिन्दी अनुवाद किया। वल्लत्तोल की मुक्तक रचनाओं का भी हिन्दी रूपांतरण हुआ। 'सीताकाव्य' के भी कई अनुवाद हुए।

आधुनिक कवियों में केरल वर्मा, राजाराम वर्मा, सी.एस. सुब्रह्मण्यम्पोट्टी का नाम आदर के साथ लिया जाता है। 20वीं सदी के लेखकों में कुमार आशान, वल्लतोल और उल्लूर प्रसिद्धि के शिखर पर हैं। आशान ने मलयाली समाज में फैले सामाजिक भेदभाव, जातपात, आर्थिक शोषण आदि के खिलाफ कविताएं लिखी। वे अतीत की अच्छाइयों, सांस्कृतिक उपलब्धियों एवं चारित्रिक विशेषताओं का गुणगान भी करते हैं। 'ग्रामवृक्षतिले कयिल' इनका महत्वपूर्ण काव्य संग्रह हैं। उनकी कविता 'वीणा पूवू' ने प्रकाशन के बाद हलचल मचा दी थी। वल्लतोल ने बाल्मीकि रामायण का अनुवाद किया एवं 'चित्रयोगम' महाकाव्य की रचना की। उनकी वधिर विलापम, बंधन स्थनाय अनिरुद्धन, किलिकोंचल आदि रचनाएं स्थायी महत्व की हैं। उल्लूर की रचनाओं में 'उमाकेरलम', 'अरुणोदय', 'तारहारम', 'किरणावली', 'रत्नमाला', 'तरंगिणी', 'अमृतधारा', 'दीपावली' आदि प्रसिद्ध हैं। इनके अलावा विष्णुनारायण नंपुतिरी, के. चेरियान, माधवन, करुणाकरषा सच्चिदानंद, राधा कृष्णन आदि उल्लेखनीय कवि हैं। भाषागत कठिनाइयों और अंतर के बावजूद मलयालम से हिन्दी में अनुवाद की परम्परा सशक्त रही है।

चंदुमेनन का उपन्यास 'इंदुलेखा' अग्रगामी रहा है। शारद और इंदुलेखा उपन्यास चंदुमेनन की ख्याति के आधार स्तंभ रहे हैं। सी. पी. रमन पिल्लै ने 'मार्तण्ड वर्मा, रामराज बहादुर, धर्मराज आदि उपन्यास लिखे हैं। के.एम. पणिक्कर भारत के सर्वतोमुखी लेखकों में हैं। उन्होंने नाटक, उपन्यास और काव्य के क्षेत्र में अपनी मजबूत उपस्थिति दर्ज की है। 'केरलसिंहम' उनका ऐतिहासिक नाटक है। परप्पुपट्टु का उपन्यास 'आनाझिक नरेम', एन. एन. पिल्लै का नाटक 'प्रेतलोकम', 'क्रासवेल्ट' और 'बंदी ईश्वर' मलयालम साहित्य में चर्चित रहे हैं। पदनाभ पिल्लै के प्रसिद्ध नाटक 'वेलुत्तंपि दलवा' का अनुवाद सुधांशु चतुर्वेदी ने किया है। भारती ने तकशि के उपन्यास 'रंडिटडशि, 'तोट्टियुटे मकन' और 'चेम्मीन' का अनुवाद क्रमशः 'दो सेर धान', 'चुनौती' और 'मछुवारे' नाम से किया है। मुहम्मद बशीर के उपन्यास 'बाल्यकालसखि' का 'शाहजादी' नाम से भट्टतिरि ने अनुवाद किया है। चंदुमेनन के 'इंदुलेखा' का अनुवाद वी. ए. केशवननंपूतिरि ने किया है। 'केरल सिंहम' का अनुवाद कृष्णमेनन ने किया है। मलयालम कहानियों के मंझे हुए अनुवादकों में रविवर्मा, सी. आर. नाणप्पा, के.जे. जोण, एन. चंद्रशेखरन नायर, पी.जी. वासुदेव, पदमकुमारी हर्षवर्धन, विश्वनाथ अय्यर आदि का नाम लिया जा सकता है।

बांग्ला साहित्य

बांग्ला साहित्य के इतिहास का प्राथमिक निदर्शन 'चर्यापद' में उपलब्ध होता है। माना जाता है कि ईसा की दसवीं या बारहवीं शती के आसपास इनकी रचना हुई है। इसमें 47 गीत संकलित हैं और इसके लेखक लूइपाद, कानुपा, भुसुक आदि बौद्ध सहजिया मतावलंबी साधक हैं। रामचद्र शुक्ल ने इन्हें अपभ्रंश या प्राकृताभास हिन्दी के रूप में स्वीकार किया है। इन गीतों का विषय निर्वाण प्राप्ति के लिए सम्प्रदाय विशेष में सीमित गुह्य तंत्र और योग से सम्बन्धित अभ्यास होता था। आदिकालीन भारतीय साहित्य की दृष्टि से सिद्धों का महत्व इस कारण भी है कि उन्होंने 'दोहाकोश' तथा 'चर्यापद' जैसी रचनाएं प्रस्तुत की, जो हिन्दी के अतिरिक्त बांग्ला, असमिया एवं ओड़िया के आदिकालीन काव्य वांड्मय का व्यापक स्थापत्य निर्मित करती है।

बंगाल में नाथपंथियों का प्रवचनात्मक मौखिक गेय पद भी मिलता हैं। जयदेव के 'गीत गोविन्द' की रचना संस्कृत में हुई है, लेकिन इस काव्य का बांग्ला साहित्य पर जबरदस्त प्रभाव पड़ा है। यह परवर्ती वैष्णव काव्य का आधार ग्रंथ है और बांग्ला नीतिनाट्य का पूर्वरूप है। पंद्रहवीं शताब्दी में 'कृतिवास रामायण' उपलब्ध होता है जो बाल्मीकि रामायण का अनुवाद माना जाता है। बांग्ला का सबसे पुराना प्रबंध काव्य 'श्री कृष्ण विजय' को माना जाता है। इसके लेखक मालाधर बसु हैं और उन्होंने कथा को भागवत और विष्णु पुराण से लिया है। वडु चंडीदास द्वारा लिखा गया 'श्री कृष्ण कीर्तन' 15वीं शताब्दी के अंतिम दिनों की रचना है। इसमें उन्होंने राधा को अनिंद्य बंगला सुन्दरी के रूप में उपस्थित किया है। बंगाल में ऐसी बहुत सी कविताओं का संकलन है जो विद्यापति द्वारा रची बताई जाती हैं, लेकिन इतना तो स्पष्ट है कि बंगला काव्य पर उसका गहरा और स्थायी प्रभाव पड़ा।

चैतन्य का 'अभ्युदय' बंगला साहित्य के इतिहास ही नहीं बल्कि उस प्रांत के सांस्कृतिक इतिहास में भी एक युगांतरकारी घटना थी। उसने प्रांत के जनजीवन को पूरी तरह से उद्वेलित कर दिया था। 16 वीं सदी के उत्तरार्द्ध और 18 वीं सदी के पूर्वार्द्ध के बीच ऐसा कोई साहित्य नहीं रचा गया जिस पर चैतन्य का प्रभाव न हो। उनके असामान्य व्यक्तित्व की प्रेरणा से बांग्ला में एक शक्तिशाली साहित्यिक संप्रदाय तथा विशाल साहित्य का सृजन हुआ। उनकी भक्ति, चरित्र और ज्ञान से प्रभावित होकर असंख्य गीत लिखे गये। वृंदावनदास ने 'चैतन्यमंगल' नामक पद्यबद्ध पहला बंगला जीवन चरित्र लिखा। कृष्णदास ने पयार छंद में 'चैतन्यचरितामृत' लिखा। इसमें उन्होंने राधा और कृष्ण को एक ही देह में शामिल अवतार माना।

15वीं शताब्दी में तीन प्रकार के मंगलकाव्य रचे गए – 'मनसा मंगल', 'चंडी मंगल' और 'धर्ममंगल'। 'मनसा मंगल' अथवा 'पदमा-पुराण' के रचयिता विजयगुप्त हैं। नारायणदेव, केतकदास और क्षेमानंद आदि मनसा मंगल के लेखक हैं। मानिकदत्त को चंडीमंगल का प्रथम कवि माना जाता है। मुकुन्दराव चक्रवर्ती ने सबसे शक्तिशाली 'चंडीमंगल' लिखा। उन्होंने इसमें सामाजिक कुरीतियों पर व्यंग्य किया है। मयुरभट्ट 'धर्ममंगल' काव्य के आदि कवि माने जाते हैं।

बांग्ला के वैष्णव कवियों ने बांग्ला और मैथिली को मिलाकर नई काव्यपद्धति का निर्माण किया जिसे 'ब्रजबुली' कहा जाता है। चैतन्य के समकालीन कवियों - मुरारिगुप्त, नरहरिसरकार, वासुदेव घोष आदि ने इस भाषा में महत्वपूर्ण काव्य रचे हैं। इन वैष्णव पदों में लौकिक प्रेम की अभिव्यक्ति हुई है। सत्रहवीं सदी में काशीरामदास ने 'बंगला महाभारत' की रचना की। इस रचना का गहरा प्रभाव बंगाली संस्कृति पर पड़ा। भागवत और पुराण को आधार बनाकर बांग्ला में कई रचनाएं की गईं। मालाधार बसु के भागवत अनुवाद के बाद माधव आचार्य, रघुनाथ पंडित और श्यामदास आदि ने भी उसके अनुवाद या रूपांतरण प्रस्तुत किये। आराकन दरबार के श्रेष्ठ कवि आलाओल ने जायसी के महान प्रेमाख्यान 'पद्मावत' का रूपांतरण किया। अठारहवीं सदी में रामेश्वर भट्टाचार्य का 'शिव संकीर्तन', भारतचंद्र का 'आनंद मंगल', 'विद्यासुन्दर', 'मानसिंह', रामप्रसाद सेन का 'कालीकीर्तन' आदि महत्वपूर्ण रचनाएं हैं।

भारत में आधुनिकता, बौद्धिकता और नवजागरण का प्रवेश बांग्ला साहित्य के माध्यम से हुआ। फोर्ट विलियम कॉलेज ने गद्य के विकास में महती योगदान दिया। राजाराममोहन राय ने 'ब्रह्म समाज' की स्थापना की। ब्रह्म समाज की स्थापनाओं को लोगों तक पहुंचाने के लिए उन्होंने गद्य का सहारा लिया। बांग्ला गद्य में शक्ति और सौंदर्य की स्थापना यहीं से देखने को मिलती है। महर्षि देवेन्द्रनाथ, भूदेव मुखर्जी, राजनारायण बसु, ताराशंकर तर्करत्न आदि ने गद्य को प्रौढ़ता तक पहुंचाया। काव्य क्षेत्र में ईश्वरचंदगुप्त, रंगालाल बनर्जी और मधुसूदनदत्त का नाम आदर से लिया जाता है। मधुसूदनदत्त ने 'तिलोत्तमासंभव', 'मेघनाद वध', 'वीरांगना' जैसे महान काव्य की सर्जना की। हेमचंद्र ने 'भारत संगीत', 'भारत विलाप', 'भारत भिक्षा' लिखकर देशप्रेम का अलख जगाया। नवजागरणकालीन कवियों में कृष्णचंद्र मजुमदार, बलदेवपंडित राजकृष्ण मुखोपाध्याय, नंदलाल घोष आदि प्रमुख हैं।

बांग्ला में स्वच्छन्दतावादी काव्य भास, कालिदास, चंडीदास, जयदेव आदि की भाव प्रवणता, सौंदर्य चेतना आदि लेकर उदित हुआ। उसमें रोमानी भाव, सूक्ष्मता, राष्ट्रप्रेम, प्रकृति चित्रण भरा है। बिहारीलाल चक्रवर्ती, सुरेन्द्रनाथ मजुमदार, द्विजेन्द्रनाथ टैगोर, देवेन्द्रनाथ सेन, द्विजेन्द्रनाथ राय और रवीन्द्रनाथ टैगोर आदि ने काव्यभूमि को शीर्ष पर पहुंचाया। रवीन्द्रनाथ प्रकृति के सौंदर्य के अदभुत चितेरे थे। संध्या संगीत, छवि ओ गान, मानसी, वसुन्धरा, उर्वशी, कणिका, काहिनी, गीतांजलि, गीतमाल्य, बलाका, पतालका, पूरवी, महुया, विचित्र, वीथिका, नैवजात तथा गीताली आदि चर्चित काव्यसंग्रह हैं। उनमें गीत, संगीत, प्रतीक, बिम्ब आदि सब अनूठे और ताजे हैं। उनके काव्य की व्यापकता और गहराई को यहां विश्लेषित करना संभव नहीं है। उनकी सभी रचनाओं का अनुवाद सिर्फ भारतीय भाषाओं में ही नहीं दुनिया की अन्य भाषाओं में भी हो चुका है। सिर्फ 'गीतांजलि' के दर्जन भर से ज्यादा अनुवाद हिन्दी के लेखकों ने किए हैं। 'गोरा' और 'घरे बाइरे' उपन्यास का भी अनुवाद प्रस्तुत किया जा चुका है। 'राजर्षि', 'आंख की किरकिरी', 'नौका डूबी' आदि उपन्यास भी चर्चित हैं। बंकिमचंद्र के उपन्यास 'दुर्गेशनंदिनी', 'आनंदमठ', 'राजसिंह', 'विषवृक्ष' आदि का भी अनुवाद हो चुका है। बंकिम ने उपन्यास के क्षेत्र में अप्रतिम सफलता अर्जित की। यहाँ तक कि हिन्दी के सामान्य पाठक उन्हें हिन्दी भाषा का रचनाकार मानते

हैं। शरतचंद्र चट्टोपाध्याय, विभूतिभूषण बंद्योपाध्याय, ताराशंकर बंद्योपाध्याय, शिलजानन्द मुखर्जी और बुद्धदेव बसु उपन्यास जगत के महत्वपूर्ण हस्ताक्षर हैं। ताराशंकर का 'गणदेवता' अनुवाद बहुपठित है। शरत के उपन्यास भी लगभग सभी भाषाओं में अनुदित हो चुके हैं। 'श्रीकांत', 'चरित्रहीन', 'पथेरदावी', 'शेष प्रश्न' आदि चर्चित उपन्यास हैं। दीनबंधु मित्र का नाटक 'नील दर्पण' का अनुवाद नेमिचंद्र जैन ने किया है। शेक्सपीयर के नाटकों का अनुवाद बांग्ला में गिरीशचंद्र घोष ने किया है। अंग्रेजी की सभी महत्वपूर्ण रचनाओं का अनुवाद बांग्ला में किया गया है और बांग्ला के सभी महत्वपूर्ण लेखकों और रचनाओं का अनुवाद हिन्दी में किया गया है।

ओड़िया साहित्य

बांग्ला की तरह चर्यागीतों में ही ओड़िया भाषा और साहित्य के अंकुरण दिखाई पड़ते हैं। उसके बाद 'शिशुवेद' 'सप्तांग' प्रथम ओड़िया काव्य के रूप में उपलब्ध होते हैं। दोनों ही कृतियां नाथपंथियों द्वारा रचित हैं। सरलादास को ओड़िया का व्यास कहा जाता है। 15वीं शताब्दी में उन्होंने 'महाभारत' की रचना की। 'विलंका रामायण' और 'चंडीपुराण' उनकी दो अन्य महत्वपूर्ण कृतियां हैं। 'विलंका पुराण' में सीता द्वारा महिरावण की मृत्यु दिखाई गई है। चंडीपुराण में वीरांगनाओं को महत्व दिया गया है। सरलादास के परवर्तियों में अर्जुनदास ने 'कल्पलता', शिशुशंकर ने 'उषाभिलाषा', मार्कण्डदास ने 'केशवकोइलि' रची।

ओड़िया साहित्य का पंचसखा युग में बलरामदास, जगन्नाथदास, अनंतदास, यशवंतदास, और अच्युतानंददास ने धार्मिक साहित्य की रचना की। बलरामदास ने प्रथम 'ओड़िया रामायण' की रचना की। यह सरलादास के महाभारत की तरह ही लोकप्रिय हुआ। अच्युतानंद ने 'शून्यसंहिता' और 'हरिवंश' की रचना की। जगन्नाथदास ने संस्कृत भागवत की तर्ज पर भागवत रचा, जो ओड़िया लोगों के धार्मिक, सांस्कृतिक, नैतिक जीवन को आज भी नियंत्रित करता है। यह लोकशिक्षा का आलम्बन बना। यह 'ओड़िया जनता की बाइबिल' नाम से प्रसिद्ध है। वैष्णव धर्म की प्रतिष्ठा इन्हीं लेखकों और रचनाओं के माध्यम से हुई।

बाद के लेखकों में लोकनाथ विद्याधर के 'नीलाद्रि महोत्सव', भूपति पंडित के 'प्रेम पंचामृत', दीनकृष्णदास के 'रस विनोद' और 'रसकल्लोल' की ख्याति असंदिग्ध है। उपेन्द्रभंज ने 'लावण्यवती' और 'कोटिब्रह्मांड सुन्दरी' जैसी प्रसिद्ध रचना लिखी। विश्वनाथ खुंटिया ने 'गीति रामायण' और केशव पटनायक ने 'वाग्विलास' लिखकर रामकाव्य को आगे बढ़ाया। ब्रजनाथ बलचौना ने वीरकाव्य 'समतरंग' लिखा। 'अंबिकाविलास' उनकी श्रेष्ठ रचना है। जनप्रिय कवि भक्तचरण ने 'मनबोध चौंतीसा' में जगन्नाथ भक्ति का अपूर्व भाव से वर्णन किया है। कृष्णसिंह का महाभारत इस दौर की विशाल कृति है। गोपाल की 'गीतावली' ओड़िया गीति साहित्य की अन्यतम उज्ज्वल कीर्ति है।

माना जाता है कि 1873 में नवीन कविता के रूप में राधानाथ और मधुसूदन की कवितावली प्रकाशित हुई। राधानाथ ने 'चिलिका सरोवर' नामक खंडकाव्य लिखा। रामशंकर ने प्रथम उपन्यास 'सौदामिनी' लिखा। फकीर मोहन सेनापति का उपन्यास 'छ माण आठ गुण्ठ', 'भामू तछमा' और 'प्रायश्चित' तथा उनकी लघुकथाएं सर्वाधिक लोकप्रिय रचनाओं में हैं। उन्होंने अपनी रचनाओं में तात्कालिक जीवन के बहुरंग उकेर दिये हैं। फकीर मोहन ने रामायण और महाभारत दोनों का ओड़िया में अनुवाद किया। ओड़िया में उनका काव्य प्रभाव दूरगामी सिद्ध हुआ।

राधानाथ राय ने तुलसी कृत 'रामचरितमानस' के कुछ अंशों का अनुवाद किया है। जगबंधुमहापात्रा ने भी 'मानस' का अनुवाद किया है। स्वप्नेश्वर दास ने जयशंकर प्रसाद की 'कामायनी', श्रीनिवास उदगाता ने भगवतीचरण वर्मा की 'चित्रलेखा', हजारी प्रसाद द्विवेदी की 'बाणभट्ट की आत्मकथा', नवलकिशोर दास ने चतुरसेन शास्त्री कृत 'वैशाली की नगर वधू' और 'वयं रक्षामः' का अनुवाद किया है। ओड़िया से हिन्दी में फकीर मोहन सेनापति की 'लक्षमा' और 'छ माण आठ गुंठ' अनुदित हो चुके हैं। राधाकृष्ण राय की 'चिलिक' आदि भी अनुदित किए गए हैं।

असमिया साहित्य

असमिया साहित्य की शुरुआत भी बांग्ला और ओड़िया की तरह ही चर्यापद से मानी जाती है। असमिया की सर्वप्रथम रचना हेम सरस्वती का 'प्रह्लाद चरित' है। यह वामन पुराण की एक उपकथा पर आधारित है। हेम

सरस्वती ने कई पुराणों के आधार पर 'हरगौरीसंवाद' लिखा। 14 वीं सदी के माधव कंदली ने 'रामायण' का रूपांतरण कर असमिया साहित्य को गति दी। हरिहर विप्र ने 'लवकुशयुद्ध' और 'बभरुवाहन युद्ध' काव्य की रचना की। कविरत्न ने महाभारत के द्रोण पर्व के अंतर्गत जयद्रथ-वध अनुपर्व के कुछ अंश का असमिया में अनुवाद किया था।

शंकरदेव ने नव वैष्णव आंदोलन के माध्यम से देश में पुनर्जागरण लाने की कोशिश की। उन्होंने 'बड़्गीतों' की रचना की। उसमें उनके शिष्य माधवदेव के 'नामघोषा' तथा 'हजारीघोषा' पद भी सम्मिलित हैं। इन वैष्णव पदों में आत्मनिवेदन, अनुताप, विनय तथा आत्मसाक्षात्कार का संतकाव्योचित भाव परिवेश है। शंकरदेव जाति और वर्ण की कठोरता के खिलाफ थे। उन्होंने सामाजिक सुधार और धार्मिक सुधार की दिशा में काम किया। शंकरदेव की 'भक्ति रत्नाकर' में कृष्णलीलाओं को स्थान मिला है। माधवदेव वरगीत, चोरधरा, पिम्परा, गुचुवा आदि नाटकों के माध्यम से कृष्णभक्ति का प्रचार किया। सूरदास की तरह वात्सल्य भाव की कविताएं लिखी। 'नाम-घोषा' उनकी महान कृति है। उनके समकालीन अनंतकंदली ने 'कुमारहरण' नामक प्रेम काव्य रचा। रामसरस्वती ने व्यंग्यकाव्य 'भीमचरित्र' की रचना की। 17 वीं सदी के प्रारंभ में दामोदरदास, गोपीनाथ लक्ष्मीनाथ आदि कवियों ने महाभारत के विभिन्न खण्डों के रूपांतरण का काम किया। श्रीकांत सूर्यविप्र ने तुलसी कृत 'रामचरितमानस' का असमिया रूपांतरण प्रस्तुत किया। गोविन्द मिश्र और रत्नाकर मिश्र ने भगवदगीता का पद्यानुवाद किया। भवानंद मिश्र और विद्याचंद्र ने 'हरिवंश' का रूपांतरण किया।

असमिया गद्य का पहला नमूना शंकरदेव और माधवदेव के नाटकों में मिलता है। भट्टदेव ने 'भागवतपुराण' और 'भगवदगीता' का अनुवाद पद्य में किया। गोपालचंद्र द्विज ने शंकरदेव की कृति 'भक्तिरत्नाकर' का गद्य में अनुवाद किया था। रघुनाथ महंत की 'कथारामायण' भी गद्य में रचित हैं। आधुनिक काल में प्रतिभा संपन्न कवियों में हेमचंद्र बरुआ हैं। उन्होंने व्याकरण और कोश निर्माण कर असमिया भाषा का मानक प्रतिष्ठापित किया। 'बाहिरे रंचं भितरे कोवा भातुरी' और 'का नियार कीर्तन' के जरिये सामाजिक दुर्गुणों को मिटाने की दिशा में ऊंची पहल की। रमाकांत चौधरी, भोलानाथ दास के बाद चंद्रकुमार अग्रवाल, लक्ष्मीनाथ बेजबरुआ, हेमचंद गोस्वामी और पदमनाथ गोहांई बरुआ ने 20 वीं सदी के असमिया साहित्य को समृद्ध बनाया।

हिन्दी साहित्य

हिन्दी का प्रथम कवि किसे माना जाए तथा इसकी शुरुआत कब हुई, इसे लेकर इतिहासकारों में विवाद रहा है। विचारों में विविधता और विवाद के बावजूद सरहपा को हिन्दी का प्रथम कवि स्वीकार किया गया है। इन्हें सहजयान का प्रवर्तक कहा जाता है। यूं तो रामचंद्र शुक्ल ने सिद्धों-नाथों और जैनियों के साहित्य को सांप्रदायिक और धार्मिक-प्रवचनात्मक मानकर त्याग दिया था लेकिन बाद के इतिहासकारों ने इस मत का खंडन कर उसे साहित्य की अनिवार्य कोटि माना। सिद्धों की परम्परा हिन्दी में बहुत दिनों तक जीवित रही है। उन्होंने अपभ्रंश मिश्रित मगही में काव्य सर्जना की है। इनका रचना समय 8 वीं शताब्दी से विक्रम की तेरहवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध तक माना जाता है। सरहपा के अलावा शबरपा, भुसुकुपा, लुइपा, विरूपा, डोम्बिपा, कण्हपा आदि सिद्ध कवि हैं। इनकी संख्या 84 बताई जाती है। इन सभी रचनाओं की विषय वस्तु वज्रयान संप्रदाय के सिद्धांतों के आधार पर है जिसमें प्रकृत अभिव्यक्ति को ही जीवन का परम लक्ष्य माना गया है। सिद्धों ने नैरात्म्य भावना, कायायोग, सहज, शून्य तथा समाधि की विभिन्न अवस्थाओं का वर्णन किया है। इन्होंने वर्णाश्रम व्यवस्था पर तीव्र प्रहार किया है। सामाजिक और धार्मिक जीवन की कृत्रिमता, घुटन और रूढ़िग्रस्तता इन्हें बिल्कुल पसंद नहीं थी। उस पर तीखा प्रहार देखने को मिलता है। शास्त्रज्ञान के खिलाफ ये चर्यागीत के रूप में उपलब्ध होते हैं।

नाथपंथ के सर्जक मत्स्येंद्रनाथ तथा गोरखनाथ हैं। गोरखनाथ की महत्वपूर्ण कृतियों में 'सिद्धसिद्धांत पद्धति', 'गोरक्षा संहिता', 'अमरौघशासनम' आदि हैं। गोरखनाथ ने पतंजलि के योग को लेकर हठयोग का प्रवर्तन किया और ब्रह्मचर्य, वाकसंयम, शारीरिक मानसिक शुचिता, मद्य-मांस के त्याग पर आग्रह किया। इन्होंने भी ब्राह्मणों के कर्मकांड और वर्णाश्रम पर तीव्र प्रहार किया।

इस काल की दूसरी आध्यात्मिक चिंतन धारा जैनियों की है। जैन मत के तीर्थंकरों ने जीवन चरित के अतिरिक्त जैन रामायण तथा महाभारत पर आधारित प्रबंध काव्य लिखे हैं। स्वयंभू ने 'पउम चरिउ' (रामायण), 'रिट्ठणेमि

चरिउ' नामक प्रमुख ग्रंथ लिखा। पुष्पदंत ने 'महापुराण' की रचना की। रामकाव्य के अलावा इन दोनों कवियों ने कृष्णकाव्य (हरिवंश पुराण) भी लिखा। इस दौर के महत्वपूर्ण कवियों में देवसेन, धवल, धनपाल, हेमचंद्र, रामसिंह आदि प्रसिद्ध हैं। इसके अलावा रोडा कवि का 'राउलवेल' और अब्दुल रहमांन का 'संदेश रासक' लौकिक-शृंगारिक काव्य भी देखने को मिलते हैं।

हिन्दी साहित्य का आदिकाल राजनीतिक रूप से राष्ट्रीय विकेन्द्रीकरण के दौर में आंख खोलता है। उस समय राज-शक्तियां बिखरी थीं। रासो काव्य की परम्परा बलवती थी। इन काव्यों की मूल प्रवृत्ति सामंतों और राजाओं के शौर्य और विलास का अतिरंजित चित्र प्रस्तुत करना था। इन काव्यों में अतिरंजित युद्ध और शृंगार भरे पड़े हैं। आदिकाल में नरपति नाल्ह का 'बीसलदेव रासो', चंदबरदाई का 'पृथ्वीराज रासो', जगनिक का 'परमाल रासो' (आल्हखंड), भट्ट केदार का 'जयप्रकाश', मधुकर कवि का 'जयमयंक-जसचंद्रिका', दलपति विजय का 'खुमान रासो', नल्ल सिंह का 'विजयपाल रासो' और विद्यापति का 'कीर्तिलता', 'कीर्तिपताका' और 'पदावली' प्रसिद्ध रचनाएं हैं। विद्यापति की 'पदावली' अपूर्व सौंदर्य से लबालब, लौकिक, ऐन्द्रिक शृंगारिक कृष्णकाव्य हैं। अमीर खुसरो (1253-1325) खड़ी बोली के प्रथम कवि माने जाते हैं। उन्होंने गीत, गजल, कहमुकरियां, पहेली, सुखना आदि लिखे हैं। खुसरो हिन्दी और उर्दू दोनों ही शैलियों में लिखने वाले कवि थे। भारतीय संगीत, भाषा, समाज, इतिहास की सामासिक संस्कृति की झलक इनकी रचनाओं में देखने को मिलती है। इस दौर में अपभ्रंश मिश्रित हिन्दी, मगही, खड़ी बोली का विस्तार देखने को मिलता है। भक्ति साहित्य का आधार भक्ति आन्दोलन है। इसका वैचारिक आधार भी है। भक्ति आंदोलन की विशेषता यह बताई जाती है कि इसमें धर्म साधना का नहीं भावना का विषय है। उसके उभार के कारणों के बारे में ग्रियर्सन ने कहा कि यह ईसाई धर्म के संपर्क के कारण हुआ। रामचंद्र शुक्ल ने इस्लामी आक्रमण से पराजित हिन्दू की हताश एवं निराश मनःस्थिति को माना जबकि हजारी प्रसाद द्विवेदी ने इसे भारतीय चिंता-धारा का स्वाभाविक विकास। यह आन्दोलन और साहित्य लोकोन्मुखता एवं मानवीय करुणा के महान आदर्श से युक्त है। भक्ति की दो धाराएं प्रवाहित हुईं - निर्गुण धारा और सगुण धारा। निर्गुण काव्यधारा की दो शाखाएँ हैं - ज्ञानाश्रयी और प्रेमाश्रयी।

ज्ञानाश्रयी धारा का प्रतिनिधित्व कबीर, रैदास, दादूदयाल, सुन्दरदास, रज्जब आदि करते हैं। कबीर की वाणी का संग्रह बीजक कहलाता है। इसके तीन भाग हैं – रमैनी, सबद और साखी। कबीर ने लोकभाषा में प्रवाहमान काव्य रच भाषा को गति दी। सूफी मत के सिद्धांतों को आगे बढ़ाने वाली प्रेमाश्रयी काव्यधारा में मुल्ला दाउद का 'चंदायन', मंझन की 'मधुमालती', कुतुबन की 'मृगावती', जायसी की 'पद्मावती', उसमान की 'चित्रावली' आदि की महत्वपूर्ण भूमिका है। इन रचनाओं के साथ ही अवधी का विकास और परिष्कार होता चला गया।

सगुण काव्यधारा के कवियों ने रामकथा और कृष्णकथा को आधार बनाकर काव्य रचना की। हिन्दी जगत के श्रेष्ठ कवियों में शुमार तुलसीदास ने 'रामचरितमानस', 'गीतावली', 'कवितावली', 'विनय पत्रिका', 'रामलला नहछू', 'बरवै रामायण' आदि लिखकर रामकाव्य परम्परा को चरम पर पहुंचाया। उन्होंने अवधी और ब्रजभाषा दोनों ही भाषाओं पर साधिकार लिखा और भाषा के सर्वतोन्मुखी विकास में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की। तुलसी के 'रामचरितमानस' का अनुवाद भारत की लगभग सभी भाषाओं में हुआ। बाद में अग्रदास और केशवदास ने रामकाव्य की परम्परा को आगे बढ़ाया। इसी दौर में हृदयराम ने संस्कृत काव्य 'हनुमन्नाटक' का अनुवाद 'भाषा हनुमन्नाटक' नाम से किया। कृष्णकाव्य के सबसे ऊंचे गायक कवि सूरदास हैं। नंददास, कृष्णदास, मीराबाई, रहीम, रसखान आदि ने इस काव्य परम्परा को आगे बढ़ाया और ब्रजभाषा को नई ऊंचाई दी। भक्ति आंदोलन के माध्यम से इन कवियों ने अखिल भारतीय सामाजिक-सांस्कृतिक परिवर्तनकारी आंदोलन का रूप दिया।

रीतिकाल के दौर में कवियों ने बड़े पैमाने पर संस्कृत में लिखे गए काव्यशास्त्रीय ग्रंथों का अनुवाद/भावानुवाद/भाषांतरण किया। रस निरूपण, अलंकार निरूपण और शृंगार वर्णन ही कवियों का मुख्य लक्ष्य था। इसका यह अर्थ नहीं कि उन्होंने मौलिक ग्रंथ नहीं लिखे या काव्यशास्त्रीय ग्रंथों में मौलिकता का अभाव है। केशवदास, सेनापति, बिहारी, भिखारीदास, देव, भूषण, मतिराम, पदमाकर, घनानंद, आलम, बोधा, ठाकुर, गुरू गोविन्द सिंह आदि रीतिकाल के प्रमुख कवि हैं। इस दौर में लगभग 300 कवि ब्रजभाषा में काव्य सर्जना कर रहे थे। आधुनिक कविता का इतिहास भी इतना समृद्ध है कि यहां उल्लेख नहीं किया जा सकता।

उर्दू साहित्य

मध्यकाल में भारत में मुसलमानों का प्रसार व्यापक भाषिक महत्व की घटना थी। उनके साथ-साथ नए धर्म, नए जीवन दर्शन और नई संस्कृति का आगमन हुआ। उर्दू के मूल में खड़ी बोली थी जो दिल्ली के आसपास बोली जाती थी। पश्चिमी हिन्दी ने ही उर्दू का आधार तैयार किया। बोलचाल की भाषा में इसे 'हिन्दी', 'रेख्ता', 'हिन्दुस्तानी' या 'हिन्दवी' कहा जाता था। संक्षेप में, उर्दू का विकास शौरसेनी प्राकृत से हुआ था।

उर्दू का आरंभिक रचनाकार कौन था बताना मुश्किल काम है। कुछ लोग आरंभिक कवि के तौर पर अमीर खुसरो का नाम लेते हैं तो कुछ वली का। गेसुदराज, शाह मीरॉनजी, बुरहानुद्दीन जानम और शाहमीनुद्दीन आला, रुसतमी, नुसरती, हाशिमी, सौव्वासी, मुल्लावजही, वली, बहरी, सिराज आदि उर्दू के आरंभिक लेखक हैं। वली की रचनाएं हिन्दी के अलावा अन्य भाषाओं में अनुदित हो चुकी हैं। सौदा, मीर तकी मीर, ख्वाजा मीर दर्द, मीर हसन, इंशा, जुरअत, नजीर अकबरावादी, मिर्ज़ा ग़ालिब, जौक आदि ने उर्दू में महान काव्य रच कर उसे न सिर्फ लोकप्रिय बनाया बल्कि अप्रतिम ऊंचाई दी। लगभग इन सभी कवियों की रचनाएं हिन्दी, अंग्रेजी के अलावा अन्य भाषाओं में भी अनूदित हो चुकी हैं।

मराठी साहित्य

मराठी का सम्बन्ध भाषाविदों ने महाराष्ट्री प्राकृत और महाराष्ट्री अपभ्रंश से माना है। क्षेत्रीय बोली या भाषा के रूप में इसका प्राचीनतम उल्लेख 8वीं सदी के ग्रंथ 'कुवलयमाला' में आता है। किंतु मराठी के आदि कवि मुकुंद राज (1128-1198) हैं, जिनका प्रधान ग्रंथ 'विवेक सिंधु' है। ये गोरखपंथी थे। इनके अन्य ग्रंथ 'पवन विजय', 'पेरमामृत', 'पंचीकरण' आदि हैं। महानुभाव काल के प्रवर्तक चक्रधर थे। इस संप्रदाय के लेखकों ने अपार साहित्य निधि गद्य और पद्य में लिख छोड़ी है। इनके अनुयायी श्रीकृष्ण, दत्तात्रेय और चक्रधर की पूजा करते थे। इनका पवित्र ग्रंथ 'लीलाचरित्र' है जो 'म्हाइभट्ट' द्वारा लिखित है।

संत ज्ञानेश्वर मराठी साहित्य के जनक और निर्माता माने जाते हैं। 'ज्ञानेश्वरी' और 'अमृतानुभव' उनकी प्रसिद्ध रचनाएँ हैं। इसे साहित्य जगत में उज्ज्वल रत्न की तरह माना जाता है। उन्होंने साधारण भाषा में 'श्रीमदभागवत्' को समझाया और शूद्रों, स्त्रियों तथा अर्द्धशिक्षितों को जागरूक बनाया। वे बारकरी संप्रदाय के भी आदि पुरुष थे। इस संप्रदाय के अन्य कवियों में निवृत्तिनाथ, मुक्ताबाई, नामदेव, एकनाथ, तुकाराम आदि हैं। इस मत के लोग सिर्फ कृष्ण की कल्पना करते हैं। वहां राधा और गोपियों के लिए जगह नहीं है। इन कवियों ने सामाजिक रूढ़ियों के प्रति विद्रोह किया। समाज को सुधारने की दिशा में क्रांतिकारी पहल की। एकनाथ ने भागवत के आधार पर 'एकनाथी भागवत' लिखा। रुक्मिणी स्वयंवर, रामायण, प्रह्लाद चरित साधारण भाषा में लिखकर निर्गुण और सगुण का भेद मिटाकर भगवान की स्तुति पर बल दिया और भक्ति का प्रचार किया। रामदास मराठी के महान कवियों मे गिने जाते हैं। दासबोध, करुणाष्टक, चौदाशतक, लघुरामायण आदि उनकी महत्वपूर्ण रचनाएं हैं।

गुजराती साहित्य

भाषा के अर्थ में गुजराती शब्द का पहला प्रयोग सबसे पहले प्रेमानंद के 'दशमस्कंध' में मिलता है। गुजराती भाषा का प्रथम उदाहरण शालिभद्रसूरि की रचना 'भरतेश्वर बाहुबली रास' में मिलता है। हालांकि हिन्दी, गुजराती और राजस्थानी तीनों भाषाओं के लोग इसे अपनी भाषा का प्रथम काव्य मानते हैं। अपभ्रंश मिश्रित गुजराती में पदमसूरि (स्थुलिभद्र फागु), राजशेखर (नेमिनाथ फागु), विनयचंद्र (नेमिनाथ चतुष्पदिका) आदि ने लिखा है।

मध्यकाल में गुजराती साहित्य वैष्णव भक्ति से आप्लावित रहा। इस दौर के कवियों ने कृष्ण भक्ति पर ही बल दिया। इसके अलावा धार्मिक आख्यान भी लिखे गए। संस्कृत के रामायण, महाभारत और पुराणों के आख्यान को पद्यबद्ध किया गया। गुजराती के कवि नरसिंग मेहता देश भर में प्रसिद्ध है। उनकी पंक्ति - 'वैष्णव जन तो तेणे कहिए जो पीर पराई जाने रे' को गांधी जी ने अपनी प्रार्थना सभा में शामिल कर जगत प्रसिद्ध किया। उनकी प्रसिद्धि औपनिषदिक दार्शनिक कविता को सहज-सरल भाषा में आमजन को सुलभ कराने के कारण भी है। उनकी ख्याति के आधार - 'हारमाला, 'सामलशाह का विवाह', 'शृंगारमाला', 'राससहस्त्रपदी', 'चातुरी', 'सुदामा चरित', 'दाणलीला' आदि पुस्तकें हैं। भालण ने भी 'शिवपुराण', 'मार्कण्डेय पुराण', 'श्रीमदभागवतपुराण', 'रामायण' आदि

ग्रंथों को गुजराती में लिखकर इस भाषा और साहित्य को गति दी। उनकी महत्वपूर्ण रचनाओं में 'नलाख्यान', 'दशमस्कंध' और 'रामबालचरित' हैं। पदमनाभ ने 'कान्हड़ दे प्रबंध', मांडण ने 'प्रबोध बत्तीसी', 'रामायण' और 'रुक्मांगदकथा', नाकर ने 'शिवविवाह', 'ध्रुवाख्यान' आदि लिखा तथा महाभारत और रामायण का अनुवाद भी किया। अरवा ने 'अरवैगीता', 'चित्रविचार संवाद पंचीकरण', 'अनुभव बिन्दु', 'कैवल्यगीता' जैसी महत्वपूर्ण रचनाएं लिखीं। प्रेमानंद गुजराती के लोकप्रिय लेखकों में शुमार किए जाते हैं। 'सुदामाचरित्र', 'हुण्डीश्राद्ध', 'ओखाहरण', 'चंद्रहासाख्यान', 'नलाख्यान' आदि लिखकर ख्याति अर्जित की। शालम भट्ट ने लोककथाओं को आधार बनाकर 'नंदबत्तीसी', 'सिंहासनबत्तीसी', 'सूडाबहोत्तरी' लिखी। वल्लभ मेवाड़ो ने अनमेल विवाह पर गरबा की रचना की। दयाराम, कृष्णाबाई, पुरीबाई, मुक्तानंद, ब्रह्मानंद, देवानंद आदि इस मध्यकाल के महत्वपूर्ण कवि रहे।

पंजाबी साहित्य

पंजाबी अपभ्रंश का ही परिवर्तित रूप है, जिसमें कश्मीरी, गुजराती, सिंधी, मराठी के साथ-साथ तुर्की, फारसी के भी शब्द मिश्रित हो गए। बाद में इसमें लहंदा का प्रभाव बढ़ता गया। पंजाबी में लिखने वाले पहले कवि 'शेख फरीद' हैं। पंजाबी के सूफी कवियों में वारिश शाह, बुल्लेशाह और सिहरफी आदि हैं। इनकी अनुदित रचनाएं हिन्दी में भी उपलब्ध हैं। 'गुरु ग्रंथ साहिब' में नानक, अंगद, अमरदास, रामदास, अर्जुन, तेगबहादुर आदि की रचनाएं सुरक्षित हैं। नानक पंजाबी के सुविख्यात संत कवि हैं। उनका प्रसिद्ध ग्रंथ 'जप साहब' है। उन्होंने अपने संदेश को जन-जन तक पहुंचाया। गुरु गोविन्द सिंह ने ब्रजभाषा, फारसी और पंजाबी तीनों भाषाओं में रचना की। उनका 'दशम ग्रंथ' पवित्र रचना माना जाता है। वे वीर योद्धा थे। उनकी रचनाएँ वीरता और भक्ति का सम्मिश्रण हैं।

कश्मीरी और सिंधी साहित्य

कश्मीरी साहित्य में सबसे प्रसिद्ध नाम लल्लदेद का है। शेख नूरुद्दीन कश्मीरी साहित्य के लोकप्रिय कवियों में हैं। 'नूरनाम' और 'ऋषि नाम' उनके प्रसिद्ध संकलन हैं। उन्हें कहावतों और सूक्तियों में लोकप्रियता मिली। हब्बा खातून, अकमालुद्दीन कामिल, महमूद गामी आदि का कश्मीरी साहित्य में महत्वपूर्ण योगदान रहा है। गामी ने फारसी के जामी, निजामी एवं अन्य लेखकों की रचनाओं का रूपांतरण कश्मीरी भाषा में किया। उनकी विख्यात मसनवियों में 'लैला मजनू', 'यूसुफ जुलेखा', 'शीरीं खुसरो' आदि हैं। सिंधी का प्राकृत भाषा से ज्यादा घनिष्ठ सम्बन्ध है। इसमें अरबी और फारसी शब्दों की भी बहुलता है। सिंधी साहित्य के सुविख्यात सर्वप्रथम कवि शाह अब्दुल लतीफ थे। 'रिसालो' उनकी प्रसिद्ध रचना है। सामी ने वैदिक ज्ञान को सिंधी में रूपांतरित किया और लोकप्रिय बनाया।

5.3 सारांश

आधुनिक भारतीय भाषाओं के विकास में अनूदित साहित्य की बहुत बड़ी भूमिका रही है। हमने पाठ अध्ययन एवं विवेचन के दौरान देखा कि आधुनिक भारतीय भाषाओं के विकास में ज्यादातर रचनाएं रामायण, महाभारत, भागवत, पुराण, उपनिषद, पौराणिक मिथकेतिहास, लोकाख्यानों और फंतासियों का आधार लेकर खड़ी हुई हैं। कमोबेश सभी आधुनिक भारतीय भाषाओं में इन साहित्यों के भरपूर अनुवाद, भावानुवाद, रूपांतरण, भाषांतरण हुए। राम, कृष्ण, शिव, बुद्ध, महावीर आदि पौराणिक मिथकीय-ऐतिहासिक चरित्र भारतीय जनमानस में गहरे पैठे थे। उनकी भक्ति और लोककथाएं संपूर्ण भारत में प्रचलित थीं। यह गौरवशाली परम्परा अविच्छिन्न रूप से संस्कृत, पाली, प्राकृत, अपभ्रंश साहित्य से होते हुए सभी आधुनिक भारतीय भाषाओं में अबाध गति से प्रवाहित होती चली गई। जाहिर है ये कथाएं अनूदित होकर साहित्य में प्रवेश हुईं, इसलिए हर भारतीय भाषा के मुहाने पर सबसे पहले अनुवाद के रूप में खड़ी दिखती हैं। जन भावनाओं को व्यक्त करने वाला यह साहित्य भाषायी विकास का भी आधार बना। आधुनिक भारतीय भाषाओं के उदय में इन साहित्य रचनाओं का महत्वपूर्ण योगदान रहा जिनके आधार पर ही आधुनिक भारतीय भाषाओं का उदय माना जाता है। इस इकाई में हमने यह भी पढ़ा कि इन साहित्यों के अनुवाद के माध्यम से भाषाओं का न केवल उदय हुआ अपितु कालांतर में अनुवाद के माध्यम से भाषाओं का विकासक्रम भी लगातार जारी है। अगली इकाई में हम इन भारतीय भाषाओं के बीच साम्य और वैषम्य के बिन्दुओं पर विस्तार से चर्चा करेंगे।

5.4 अभ्यास के लिए प्रश्न

1) आधुनिक भारतीय भाषाओं के साहित्य के विकास के मूल उत्स क्या हैं।
2) आधुनिक युग के मलयालम हिन्दी अनुवादों का वर्णन कीजिए।
3) तेलुगु भाषा के विकास में अनुवाद के महत्व पर प्रकाश डालिए।
4) आधुनिक भारतीय भाषाओं के विकास में अनुवाद की भूमिका लिखिए।
5) असमिया के विकास पर रामकथा के प्रभाव की व्याख्या कीजिए।
6) हिन्दी में राम और कृष्ण काव्य के आधार पर साहित्य विकास की परम्परा का वर्णन कीजिए।

5.5 शब्द सूची

- **उत्पत्ति** - जन्म, उत्पादन
- **आख्यान** - कहना, वर्णन, वृत्तांत
- **उत्स** - स्त्रोत
- **उत्सर्ग** - अलग करना,
- **अपभ्रंश** - शब्दों का विकृत रूप, प्राकृत भाषाओं का परवर्ती रूप जिससे आधुनिक आर्य भाषाओं का विकास हुआ
- **नलोपाख्यान**- राजा नल की कथा

5.6 कुछ उपयोगी पुस्तकें

- नगेन्द्र, डॉ.; *भारतीय साहित्य,* दिल्ली, प्रभात प्रकाशन।
- नगेन्द्र, डॉ.; *हिन्दी साहित्य का बृहत् इतिहास* (खंड-15), काशी, नागरी प्रचारिणी सभा।
- त्रिपाठी, रामछबीला; *भारतीय साहित्य,* दिल्ली, वाणी प्रकाशन।
- शर्मा, गोपाल, तारा तिक्कू एवं जगदीश चतुर्वेदी (सं); *भारतीय भाषाओं के साहित्य का संक्षिप्त इतिहास,* दिल्ली, केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय।
- सेन, सुकुमार; *बंगला साहित्य का इतिहास,* - साहित्य अकादेमी।
- मुगलि, रं. श्री.; *कन्नड़ साहित्य का इतिहास,* - साहित्य अकादेमी।
- वरदराजन, मु.; *तमिल साहित्य का इतिहास,* - साहित्य अकादेमी।
- नायर, पी.के. परमेश्वरन; *मलयालम साहित्य का इतिहास,* - साहित्य अकादेमी।
- अजवाणी, लालसिंह हजारीसिंह; *सिंधी साहित्य का इतिहास,* - साहित्य अकादेमी।
- शुक्ल, रामचंद्र; *हिन्दी साहित्य का इतिहास,* काशी, नागरी प्रचारिणी सभा।
- सिंह, बच्चन; *हिन्दी साहित्य का दूसरा इतिहास,* दिल्ली, राधाकृष्ण प्रकाशन।
- माचवे, प्रभाकर (अनु.); *आज का भारतीय साहित्य,* - साहित्य अकादेमी।
- पनिकर, क.अय्यप्पा; *मेडिएवल इंडियन लिटरेचर सीरीज* (वाल्यूम 1-4), - साहित्य अकादेमी।
- राघवन, वी.; *द रामायणा ट्रेडिशन इन एशिया,* - साहित्य अकादेमी।

इकाई 6 आधुनिक भारतीय भाषाओं के बीच साम्य एवं वैषम्य

इकाई की रूपरेखा

6.0 उद्देश्य

6.1 प्रस्तावना

6.2 भारतीय भाषाओं के बीच साम्य एवं वैषम्य

6.2.1 स्वनिमिक व्यवस्था

6.2.2 रूपिमिक व्यवस्था

6.2.3 वाक्यविन्यासी और आर्थी व्यवस्था

6.2.4 समाजशास्त्रीय और व्यावहारिक व्यवस्था

6.3 सारांश

6.4 अभ्यास के लिए प्रश्न

6.5 कुछ उपयोगी पुस्तकें

6.0 उद्देश्य

इस इकाई के मुख्य उद्देश्य हैं :

- भारतीय भाषाओं में स्वनिमिक, रूपिमिक और वाक्यात्मक समानताओं को समझना;
- ये समानताएँ किस प्रकार आईं? ये समान अभिलक्षण एक भाषा परिवार से दूसरी भाषा परिवार में किस प्रकार स्थानान्तरित हुए; और
- प्रत्येक भाषा परिवार के विशिष्ट अभिलक्षण जो अभी भी विद्यमान हैं।

6.1 प्रस्तावना

भाषाओं में समानता और असमानता के बारे में बात करने से पहले हमें भाषा की मूल संरचना को समझने की आवश्यकता है। भाषा व्यवस्थाओं की व्यवस्था है, जिसमें ध्वनि व्यवस्था, रूपिमिक व्यवस्था, वाक्य संरचना तथा आर्थी एवं संकेत प्रयोगिकी विद्यमान होती है। जब भाषा को मान्यता प्राप्त होती है तो इसका अर्थ है कि वह इन उपव्यवस्थाओं का एक 'अद्वितीय' समूह है। यदि इस दृष्टिकोण से देखा जाए तो संसार में सभी भाषाएँ एक-दूसरे से भिन्न हैं। किन्हीं भी दो भाषाओं में सारे उपसमूह एक जैसे नहीं होते।

क्या इसका तात्पर्य यह है कि भारतीय भाषाओं में कोई समानताएं या समरूपताएं नहीं हैं?

उपर्युक्त प्रश्न का उत्तर अलग-अलग हो सकता है - कैसे?

- सभी मानवीय भाषाओं में कुछ सामान्य (common) गुण विद्यमान होते हैं जिन्हें भाषा का 'डिजाइन फीचर' (Design feature of lg) (हॉकेट, 1960) कहते हैं। साथ ही, चॉमस्की (1975) के अनुसार भाषा अर्जन प्रभावित होता है। क्योंकि भाषाओं में समान गुण होते हैं जिन्हें भाषायी/भाषिक सार्वभौम कहा जाता हे। यह ज्ञान मनुष्यों में पहले से ही (क्रमबद्ध) होता है जो हमें कोई भी भाषा इतनी जल्दी और सहजता से अर्जित करने में सहायता करता है। अतः सभी भाषाओं में कुछ न कुछ समान होता है। लेकिन यहां हम इस प्रकार की समानताओं की बात नहीं कर रहे हैं।
- आनुवांशिक सम्बन्ध रखने वाली भाषाओं में ही समान अभिलक्षण विद्यमान होते हैं। इस प्रकार की भाषाओं में समान स्वनिमिकी, वाक्यीय और कोशीय इकाइयाँ विद्यमान होती हैं। उदाहरणस्वरूप हिन्दी की सभी

बोलियां (dialects) पूरे उत्तरी (northern) भाग में एक-दूसरे के लिए बोधगम्य हैं। साथ ही, भाषा परिवारों (भारतीय-आर्य, द्रविड़, तिब्बतो-बर्मन, ऑस्ट्रिक व अंडमानीज) की संकल्पना इस तथ्य पर आधारित है कि एक परिवार के अंतर्गत आने वाली भाषाएँ मूल रूप से एक-दूसरे से सम्बन्धित हैं। यही कारण है कि इनमें समान अभिलक्षण होते हैं। इसी कारण इनमें सामान्य अभिलक्षण आ जाते हैं। लेकिन एक ही भाषा परिवार की सभी भाषाओं में यह अभिलक्षण हो, यह आवश्यक नहीं। जैसे - कश्मीरी भाषा में शब्द क्रम (word order) सभी भारतीय-आर्य भाषाओं से अलग होता है। इन विभिन्नताओं का क्या कारण है?

- जो भाषाएँ शताब्दियों से एक-दूसरे के सम्पर्क में आती रही हैं उनमें कई सामान्य अभिलक्षण विकसित हो जाते हैं। ऐसे अभिलक्षणों को क्षेत्रीय अभिलक्षण (areal features) और उस भौगोलिक क्षेत्र (Geographical area) को भाषायी क्षेत्र (Linguistic area) कहा जाता है। यह सम्पर्क और मेल सभी भाषिक चरणों और प्रायः भाषा से होकर गुजरता है जो उसी भाषा परिवार की अन्य सहज भाषाओं से बिल्कुल भिन्न होता है।

इन चार भाषा परिवारों ने भारतीय भाषाओं में सम्पर्क व मेलजोल के कारण अनेक समान अभिलक्षण अर्जित कर लिए हैं। एक क्षेत्र की 'सम्पर्क में आने वाली भाषाएँ' द्विभाषिकता की ऊँची दर से इंगित होती हैं। इनमें 'गृहीत' शब्दों की अच्छी मात्रा पाई जा सकती है जो ध्वनि और अर्थ दोनों में दाता भाषा के शब्दकोश से मिलते-जुलते हैं। इस प्रकार के लम्बे व स्थिर सम्पर्क के फलस्वरूप केवल ध्वनियों और उनके अर्थ में ही समानता नहीं आती बल्कि व्याकरणिक संरचना और अर्थों में भी समानता आ जाती है' (Abbi, 1993)। किंतु भारतीय भाषाओं ने पूरी तरह से अपनी विशिष्टताएं नहीं छोड़ी हैं। इसी तथ्य पर हम इस इकाई में चर्चा करने जा रहे हैं।

6.2 भारतीय भाषाओं के बीच साम्य एवं वैषम्य

भारत चार भाषा परिवारों का घर है अर्थात् : भारतीय-आर्य, द्रविड़, ऑस्ट्रो-एशियाटिक और तिब्बती-बर्मन। भारतीय-आर्य भाषा परिवार उत्तरी, पश्चिमी, केन्द्रीय और पूर्वी भारत के कुछ भागों में फैला हुआ है। द्रविड़ भाषाएँ ज्यादातर दक्षिण में और कुछ मध्य उत्तर भारत (कुरुक्स और माल्टो, Kurux and Malto) के कुछ छोटे-छोटे भागों में बोली जाती हैं। ऑस्ट्रो-एशियाटिक भाषाएँ मध्य भारत एवं उत्तरी-पूर्वी (खासी) भारत में बोली जाती हैं। तिब्बत-बर्मन भाषाएँ मुख्यतया उत्तर-पूर्वी भारत में बोली जाती है। प्रत्येक भाषा परिवार के अपने विशिष्ट अभिलक्षण भी हैं। ये चारों भाषा परिवार शताब्दियों से सम्पर्क में हैं, जिसके परिणाम स्वरूप उनमें कई सामान्य अभिलक्षण हैं।

अंडमान द्वीप समूह के क्षेत्रीय पार्थक्य के कारण देश के अन्य भागों के साथ अंडमानी भाषा का कोई निकटस्थ भाषिक सामंजस्य/तालमेल नहीं है। प्रत्येक स्तर पर 'सामान्य' और विशिष्ट अभिलक्षणों को समझने के लिए अब हम प्रत्येक उपव्यवस्था का अध्ययन करेंगे।

6.2.1 स्वनिमिक व्यवस्था (Phonological System)

स्वरों (Vowels) को ऊँचाई (Height), गोलाई (roundness), अग्र (front)/पश्च (back), और लंबाई (length) के आधार पर विभक्त किया जाता है। भारतीय-आर्य स्वर ऊँचाई - ई (I), इ (i), ऊ (U), उ (u), ए (e), ओ (o), आ (a) के आधार पर अपनी विशिष्टता बनाए रखते हैं। लेकिन द्रविड़ भाषाओं में स्वरों को ह्रस्व और दीर्घ - इ, ई (i, i), ऊ, उ (u, u), ए, ऐ (e, e), ओ, औ (o, o) के आधार पर अलग किया जाता है। ऑस्ट्रो-एशियाटिक भाषाएँ - इन दोनों भाषा परिवारों से प्रभावित होती रही हैं और इनमें दोनों प्रकार की विशिष्टताएं होती हैं। अतः इन भाषाओं में बड़ी संख्या में स्वर विद्यमान हैं। सन्थाली में 22 अलग-अलग स्वर विद्यमान हैं। भारतीय-आर्य भाषाओं में अनुनासिक (Hasalization) स्वरों को अलग से पहचाना जा सकता है। जैसे - हिन्दी में साँस (sa : s)-breath और सास (sa : s)-mother-in-Law आदि। ध्यान दें कि हिन्दी में सभी मौखिक स्वरों (oral vowels) के कई स्वनिम (Phoneme) अनुनासिक रूपान्तर होते हैं। इस प्रकार की अनुनासिकता द्रविड़ भाषाओं तिब्बत-बर्मन और खासी भाषा में नहीं पायी जाती हैं। इस परिवार की दूसरी उपशाखा, मुण्डा भाषाओं में भी अनुनासिकता देखी जा सकती है (जो भारोपीय भाषाओं के प्रभाव के कारण हो सकती है)

ऑस्ट्रो-एशियाटिक का एक इंगित लक्षण, जो इसे अन्य परिवारों से अलग करता है -स्वर संगति।(स्वर संगति वाली भाषाओं में ऐसे अभिभव/दबाव होते हैं जिन पर स्वर एक-दूसरे के निकट पाए जाते हैं। ये आगे-पीछे दोनों दिशाओं में हो सकते हैं।)

करिया : जिब - 'स्पर्श करना' जि-नि-ब : 'एक स्पर्श'
जोब - 'चूसना' जो-नो-ब : '?'

व्यंजनों को उच्चारण के ढंग (manner) और स्थान (Place of articulation) के आधार पर वर्गीकृत किया जाता है। ये विशिष्ट अभिलक्षणों के ऐसे उदाहरण प्रस्तुत करते हैं जो एक भाषा परिवार की विशिष्टताएं बताते हैं। द्रविड़ भाषाओं में विराम के लिए उच्चारण के बिंदुओं की एक लंबी श्रृंखला हैं। टोडा (Toda) और मलयालम में मौखिक और नासिक्य विराम दोनों को छः तरीकों –/p,t̪,ʈ,c,k,/ and /m, n̪, n, ɳ, ɲ,ŋ/. से प्रदर्शित किया जाता है।

ऑस्ट्रो-एशियाटिक में एक अक्सर पाया जाने वाला विराम व्यंजन काकल्य विराम //. है, जो कण्ठ को सिकोड़कर उत्पन्न किया जाता है। इस प्रकार सन्थाली में u:p/ 'hair' है लेकिन /ʔu:p/ 'put' है

तिब्बत-बर्मन समूह की भाषाएँ, द्रविड़ भाषाओं के साथ उत्तर-मध्य भारत में बोली जाती हैं और इनमें काकल्य स्पर्श के आधार पर बड़ी संख्या में शब्दावली निर्माण कर लिया गया है। लेकिन भारतीय-आर्य और द्रविड़ भाषाओं में इस तरह की ध्वनियों का अभाव है।

तिब्बत-बर्मन की दूसरी महत्वपूर्ण विशेषता है - उसकी अभिव्यक्ति शैली (Tonal Nature)। /kɔhuŋ/ शब्द के टोन प्रयोग के आधार पर तीन अर्थ हो सकते हैं - यदि उठते स्वर में बोला जाए तो 'red' यदि समान (flat) स्वर में बोला जाए तो 'rotten' और यदि गिरते स्वर में बोला जाए तो 'lime'।

स्पर्श की महाप्राण ध्वनियों को तुलनात्मक भाषाविदों ने एक ऐसा अभिलक्षण पाया है जो मुख्यतया भारतीय-आर्य है और अब लगभग सभी भाषा परिवारों में पाया जाता है। जैसे - फ (ph), भ (bh), थ (th), ध (dh), छ (ch), झ (jh), ख (kh), घ (gh) आदि। इसका भारतीय भाषाओं में स्वनिक (phonemic) स्तर है जो अंग्रेजी में नहीं है। अंग्रेजी में महाप्राण, उपस्वनिक (Allophonic) हो जाता है। इसमें शब्दों के प्रारम्भ की स्पर्श ध्वनियां सदैव महाप्राण के साथ उच्चरित की जाती हैं। लेकिन शब्दों की दूसरी स्थितियां होने पर कभी भी महाप्राण नहीं होतीं। कृष्णमूर्ति (Krishnamurthy, 1998) ने स्पष्ट किया है कि - मलयालम में स्वनिक महाप्राण ध्वनियां नहीं है लेकिन यह तेलुगु और कन्नड़ में बहुत बड़ी मात्रा में विद्यमान होती हैं जो कि संस्कृत से आई हुई हैं।

भारतीय भाषाओं का दूसरा सामान्य अभिलक्षण है - मूर्धन्य ध्वनियां (Retroflex Sounds)। ये मुख्यतः द्रविड़ भाषाओं का प्रमाणक हैं (इनमें पार्श्विक (lateral), नासिक्य (Nasal), स्पर्श (stop) और मूर्धन्य (Retroflex) भी हैं) किंतु मूर्धन्य अब सभी भारतीय भाषाओं में पाया जाने लगा है।

6.2.2 रूपिमिक व्यवस्था

भाषाओं को प्रायः रूपिमों के एक-दूसरे से जुड़ने के आधार पर एक-दूसरे से भिन्न किया जाता है। रूपात्मक प्रारूप (Morphological Typology) के आधार पर इन्हें चार प्रकार से वर्गीकृत किया जा सकता है। अयोगात्मक (isolating), बहुसंश्लेषणात्मक (Polysynthetic), योगात्मक (agglutinative) और श्लिष्ट योगात्मक (inflectional) आदि। अयोगात्मक भाषाओं में व्याकरणिक दृष्टि से प्रत्येक शब्द में अलग-अलग रूपिम होता है अर्थात् प्रत्येक व्याकरणिक प्रकार्य के लिए एक भिन्न शब्द होता है। चीनी (chinese) और वियतनामी (vietnamise) इस प्रकार की भाषाओं के उदाहरण हैं। बहुसंश्लेषणात्मक भाषाओं में एक ही शब्द में कई रूपिम होते हैं और सम्पूर्ण वाक्य/विचार का एक ही शब्द होता है। योगात्मक भाषाओं में एक ही शब्द में कई रूपिम होते हैं। लेकिन प्रत्येक रूपिम किसी एक ही व्याकरणिक अर्थ को बताता है। प्रत्येक रूपिम सरलता से विभक्त किया जा सकता है जैसे कि तुर्की। दूसरी ओर अयोगात्मक भाषाएँ प्रत्येक शब्द में कम रूपिम प्रयोग करती हैं क्योंकि रूपिम अनेक व्याकरणिक अर्थ देता है। जैसे रशियन या रूसी (Russian) और स्पेनिश (spanish) आदि।

भारतीय-आर्य श्लिष्ट योगात्मक भाषाएँ हैं और इसमें एक रूपिम कई व्याकरणिक कार्यों को द्योतित करता है। उदाहरणस्वरूप हिन्दी शब्द किताबों /kita:bõ/ books में बहुवचन रूपिम (Plural morpheme) और प्रत्यय 'ओं' में कर्मकारक को पहचानना कठिन कार्य है। द्रविड़ भाषाएँ योगात्मक हैं और इनमें शब्द के प्रत्येक रूपिम को आसानी से पहचाना जा सकता है। प्रत्येक रूपिम का एक ही कार्य होता है जैसे, तमिल में /koṭu-tt-e:n/ को आसानी से 'give-pst-15g' के रूप में अलग किया जा सकता है। इसके विपरीत तिब्बत-बर्मन की अधिकतर भाषाएँ अयोगात्मक हैं।

मैथेई (meithei):

[unpant^{h}a] 'winter'

un-pan-t^{h}-a 'ice-rule-month' (Bhat, 1994)

(Bhat, 1994)

ऑस्ट्रो-एशियाटिक योगात्मक भाषाएँ हैं किंतु इन भाषाओं, विशेषतः मुण्डा समूह की भाषाओं का एक निश्चित गुण हैं जिसमें कर्त्ता (subject) और कर्म (object) की सभी सूचनाएं जटिल क्रिया का हिस्सा होती हैं।

खरिया :

musa hokəɽ-te gil-te-niŋ

today he –acc hit-tr. pres-Ipl incl

'we hit him today'

भाषाएँ शब्द रचना को कई प्रकार से प्रदर्शित करती हैं। ऑस्ट्रो-एशियाटिक में पुनरूक्ति (Reduplication) द्वारा शब्द उत्पादन एक बहुत उत्पादक युक्ति है। पुनरूक्ति का अर्थ है एक शाब्दिक इकाई की सारी या कुछ इकाइयों की पुनरूक्ति जिससे एक नए अर्थ का उत्पादन होता है।

जैसे - खरिया :

[bor]	'to ask'	and [bor_bor]	begging.
(बोर)	'पूछना'	और (बोर-बोर)	'मांगना'

सन्थाली :

[dal]	'to strike'	and [dal-dal]	'strike-vigorously'.
(डाल)	'मारना'	और (डाल-डाल)	'सशक्त प्रहार'

वास्तव में, पुनरूक्ति एक अखिल भारतीय अभिलक्षण है और भारतीय भाषाओं ने शब्द रचना उपकरण के तौर पर सभी प्रकार की पुनरूक्तियों का प्रयोग किया है।

वक्तृबोधक (expressives)

पुनरूक्ति ध्वनियों का समूह है जो अन्य अर्थ बनाने के लिए प्रयोग किया जाता है। हम जानते हैं कि भाषाओं में अनुरणन (onomatopoeic) शब्द बनाने के लिए इस प्रकार की प्रणाली बहुत प्रचलित है। तो इन प्रणालियों में ऐसी क्या विशेषता है कि इनकी यहां चर्चा की जा रही है। अब्बी (1994) इस प्रश्न का उत्तर देती हैं कि भारतीय वक्तृबोधकों का सबसे महत्वपूर्ण पक्ष यह है कि वे शब्द निर्माण की एक गत्यात्मक (dynamic) प्रक्रिया निरूपित करते हैं जो पांच ज्ञानेन्द्रिय अवधारणा का समर्थन करता है अर्थात् – गंध (smell), स्पर्श (touch), दृश्य (sight), श्रवण (hearing) और स्वाद (taste)। खटखटाने की ध्वनि को विभिन्न भाषाओं में इस प्रकार के शब्दों द्वारा प्रकट करते हैं :

हिन्दी	[khat khat]	खट-खट
कुरुख	[ʈok ʈok]	टोक-टोक
मिज़ो	[kaun kaun]	कॉन-कॉन
सन्थाली	[ʈo ʈo]	टो-टो

अब्बी (Abbi) ने यह भी स्पष्ट किया कि भारतीय भाषाओं में वक्तृबोधकों को विशेष रूप से रीतिवाचक क्रियाविशेषणों के रूप में प्रयोग किया जाता है। ये भारतीय वक्ताओं को गहन और सूक्ष्म अन्तरों या भेदों के साथ ऐसी क्रियाओं को व्यक्त करने में भाषायी सुविधा देते हैं जो भारतीय सभ्यता से इतर अनाभिव्यक्त या अनदेखी ही रह जाती हैं। अपने दावे को मजबूत करने के लिए वे खासी के कुछ उदाहरण देती हैं-

iaid□		'to walk'
iaid□	bak bak	'to walk/go unhurriedly'
iaid□	don don	'toddle like a child'
iaid□	toin toin	'to walk without hesitation'
iaid□	tuin tuin	'to walk with hesitation'
iaid□	ter ter	'to walk in a line/order'
iaid□	dot dot	'(of an old person) week and unsteady walk'
iaid□	leng leng	'walking carelessly'

भारतीय भाषाओं में वक्तृबोधक का प्रयोग बंधुतावाची शब्दावली (kinship terms) के रूप में भी किया जाता है। जैसे :

हिन्दी में

चाचा (caca)	पैतृक चाचा
मामा (mama)	मामा
दादा (dada)	दादा
नाना (nana)	नाना

आंशिक पुनरूक्ति (Partial Reduplication)

इसमें नया अर्थ देने के लिए शाब्दिक इकाई के किसी एक अंश की ही पुनरूक्ति होती है। यह एक प्रकार की शब्दों की प्रतिध्वनि होती है। नीचे दिये उदाहरणों में हम देख सकते हैं कि उनमें विस्तार का भाव है जैसे पानी-वानी में जल या किसी भी पीने की चीज को लक्षित किया गया है। दूसरे शब्दों में, यह अर्थ में व्यापकता का भाव और असुनिश्चितता का अर्थ जोड़ता है।

(अब्बी : 2001)

हिन्दी :	(पानी-पानी)	'जल इत्यादि'
	(खाना-वाना)	'भोजन इत्यादि'
तेलुगु :	(पुली-गिली)	'बाघ आदि'
	(पक्का-गक्का)	'हरा व हरियाली आदि'
कश्मीरी :	[cay ʔay]	चाय आदि (नाश्ता)
	[kitab ʃitab]	किताब वगैरह जैसे पाठ्य सामग्री

यह ध्यान देने योग्य है कि प्रत्येक भाषा में डम्मी (dummy) व्यंजन का चयन करने की अपनी विशेषताएं होती हैं जिसे प्रतिध्वनि उत्पन्न करने में प्रयोग किया जाता है। उपर्युक्त उदाहरणों में हिन्दी में 'व' तेलुगु में 'ग' और कश्मीरी में 'इ' आदि को देखा जा सकता है।

अब्बी ने यह भी स्पष्ट किया है कि सबसे अधिक ध्वनि की जाने वाली व्याकरणिक इकाई संज्ञा है। यद्यपि विशेषण, सर्वनाम और क्रियाएं सभी समान तरीके से प्रतिध्वनित होती हैं लेकिन संज्ञाओं की संख्या ज्यादा होती है।

पूर्ण पुनरूक्ति (Complete Reduplication)

जैसा कि नाम से स्पष्ट है जब कोई शाब्दिक इकाई पूरी तरह से दुहराई जाती है तो उसे पूर्ण पुनरूक्ति कहते हैं। भारतीय भाषाओं में सभी व्याकरणिक कोटियां (संज्ञा, विशेषण, क्रिया तथा क्रिया विशेषण) सभी अर्थ की बड़ी संख्याओं में पुनरूक्त की जा सकती हैं।

इन शब्द निर्माणों का प्रयोग आधा (iteration), निरन्तरता (continuity), वितरणात्मकता (distributiveness), अभिप्राय (intensity) या एककालिक घटना (simultaneity) आदि कार्यों के द्योतन के लिए किया जाता है।

हिन्दी में -

(घर-घर)	'प्रत्येक घर'
(धीरे-धीरे)	'धीरे का अभिप्राय'
(चलते-चलते)	'निरन्तरता टहलते समय'
(कर-कर के)	(continuation of doing)
[kar kar ke]	

तेलुगु में - [ɱʈɪ ɱʈɪ] (each and every home)
(प्रत्येक घर)

[vedi-vedi] (hot-hot)
(गरम-गरम)

(continuity/simultaneity- seen seen)
देखा-देखा

6.2.3 वाक्यविन्यास और आर्थी व्यवस्था

प्रत्येक भाषा में वाक्य निर्माण की विशेष व्यवस्था होती है। वाक्य की रचना, शब्द क्रम (words order) के आधार पर हो सकती है। (संज्ञा, क्रिया, विश्लेषण, और क्रिया विश्लेषण आदि का) वाक्य में शब्द भेद का विशेष क्रम होता है। शब्द भेद में क्रिया सबसे महत्वपूर्ण है और इसके बिना कोई वाक्य संभव ही नहीं। क्रिया वाक्य के प्रारम्भ, मध्य और अन्त में आ सकती है। वाक्य में क्रिया की स्थिति, वाक्य में दूसरे निपात (Particles) की स्थिति को निश्चित करती है। ऐसी भाषाएँ जिनमें वाक्य के अन्त में क्रिया आती है उन्हें क्रिया-अन्तिम भाषाएँ (Verb-final languages) कहते हैं। ऐसे ही जिन भाषाओं के वाक्यों के मध्य में क्रिया आती है उन्हें क्रिया-मध्यम भाषाएँ (Verb-medial languages) कहते हैं। यदि भाषा के वाक्यों के प्रारम्भ में क्रिया आती है तो उन्हें क्रिया-प्रारम्भिक भाषाएँ (Verb-initial languages) कहते हैं। हम जानते हैं कि हिन्दी में वाक्य के अन्त में क्रिया आती है। वहीं अंग्रेजी में वाक्य के मध्य में क्रिया आती है अर्थात् कर्म (object) के पहले क्रिया होती है। ये भाषाएँ इसी रूप में वर्गीकृत हैं क्योंकि वाक्यों में क्रिया की स्थिति के आधार पर प्रत्येक भाषा समूह की अपनी विशेषताएं एवं अभिलक्षण हैं।

आइये अब भारतीय भाषाओं में शब्द क्रम की चर्चा करें :

खासी (ऑस्ट्रो एशियाटिक) और कश्मीरी को छोड़कर ज्यादातर भारतीय भाषाओं में मूल शब्द क्रम, क्रिया-अन्तिम होता है। लेकिन भारतीय भाषाओं में कठोर रूप से 'निर्धारित' शब्द क्रम नहीं होता।

जैसे - हिन्दी में :

राम ने रावण को तीर से मारा
रावण को राम ने तीर से मारा
मारा तीर से राम ने रावण को
तीर से रावण को राम ने मारा

ये सभी वाक्य ग्राह्य हैं क्योंकि प्रत्येक संज्ञा के बाद परसर्ग (post position) में बहुत सारी सूचनाओं को सम्प्रेषित (coded) किया गया है। लगभग सबसे अधिक प्रयोग किया जाने वाला शब्द क्रम कर्त्ता, कर्म व किया है। सभी भारतीय भाषाओं में इस प्रकार का वाक्य अवयवों (sentence constituents) का स्थानान्तरण (movement) संभव है। यहां, महत्वपूर्ण तथ्य यह है कि इस प्रकार वाक्य निर्माण का उद्देश्य विशेष सूचनाओं पर ध्यान केन्द्रित करना होता है।

यूरोपीय भाषाओं में शब्द क्रम का यह परिवर्तन संभव नहीं है। जैसे अंग्रेजी में अग्रलिखित वाक्य ग्राह्य नहीं है:

Ram Ravan killed

Killed Ram Ravan.

क्रिया-अन्तिम भारतीय भाषाओं के कुछ गुण आगे दिये जा रहे हैं :

(क) क्रिया-अन्तिम भाषाओं में परसर्ग होते हैं। कर्त्ता-कर्म-क्रिया (SOV) युक्त भाषाओं में परसर्ग संज्ञा के बाद निपात के रूप में आता है। अंग्रेजी में इसे पूर्वसर्ग (prepositions) के रूप में व्यक्त किया जाता है। प्रायः यह देखा गया है कि जिन भाषाओं में विस्तृत परसर्ग प्रणाली है उनमें कारक चिह्न प्रत्यय (case marker suffices) नहीं होते हैं। लेकिन हिन्दी में दोनों हैं :

हिन्दी :

(कमरे में)
Room in (post position)
'in the room'

तेलुगु :

gədr **I**
room in
rum **a:h**
room in

मिज़ो :

rum **a:h**
room in (सुब्बाराव, 1995)

(ख) क्रिया-अन्तिम भाषाओं में सहायक (helping) क्रियाएं सदैव मुख्य क्रिया का अनुसरण करती हैं : क्रिया-मध्यम, क्रम (sov) वाली भाषाओं में सहायक क्रियाएं मुख्य क्रिया के पहले आती हैं जैसे, खासी भाषा में। यह ध्यातव्य है कि अंग्रेजी SVO क्रम वाली भाषा है जिसमें खासी के समान सहायक क्रिया का स्थान निश्चित होता है। यहां नीचे खासी वाक्य का अंग्रेजी अनुवाद दिया जा रहा है जिसमें हम देखेंगे कि सहायक क्रियाएं कैसे मुख्य क्रिया 'eat' के पहले आती है।

ŋa **la-ba:m** ya-u-s ?
I pst-eat acc-msculine-fruit
'I have eaten the fruit'

लेकिन SOV भाषाओं में सहायक क्रिया वाक्य के अन्त में आती है।

हिन्दी :

pu ɟa? kʰel **r hi hai**
Puja play **to be is**
'Puja is playing'

तेलुगु : pu ɟa: cəduvu- **tunndɪ**
Puja study-**to be**
'Puja is studying' (सुब्बाराव, 1995)

(ग) सामान्यतः अप्रत्यक्ष कर्म (indirect obeject), प्रत्यक्ष कर्म (direct obeject) का पूर्ववर्ती होता है : सकर्मक क्रियाओं (transitive verbs) में कर्त्ता के साथ कर्म की आवश्यकता होती है। द्वि-सकर्मक क्रियाओं में दो कर्म हो सकते हैं। भारतीय भाषाओं में प्रायः वाक्य में प्रत्यक्ष कर्म के पहले अप्रत्यक्ष कर्म आता है। नीचे दिये वाक्यों में 'to give' क्रिया है तथा 'पूजा' जिसे प्रत्यक्ष कर्म दिया जा रहा है। एक अप्रत्यक्ष कर्म (Indirect object) है और 'किताब' जो दी जा रही है एक प्रत्यक्ष कर्म (Direct object) है।

हिन्दी : राम **पूजा** को **किताब** देगा

Ram Puja-acc (IO) book (DO) give
'ram will give book to Puja'

तेलुगु :

Ram Puja-acc(IO)book(DO) give (सुब्बाराव, 1995)

(घ) समय इंगित करने वाले क्रिया-विशेषण सदैव स्थान इंगित करने वाले क्रिया विशेषण से पहले आते हैं। प्रायः भारतीय भाषाओं में समय के क्रिया विशेषण, स्थान के क्रिया विशेषण का पूर्ववर्ती होता है। किंतु हिन्दी में यह स्थान कभी-कभी परिवर्तित किया जाता है (ध्यान आकर्षित करने या जोर डालने के लिए)

जैसे :

हिन्दी :

हम कल बनारस जाएंगे।

We tomorrow (time adv) Banaras (place adv)-go-fut
'Tomorrow, we will go to Banaras.'

अग्रलिखित वाक्य भी हिन्दी में सही है -

ham banaras kal jaenge na ki a:j
(हम बनारस कल जाएंगे न कि आज)

तेलुगु :

Memu repu banaras velta: m
We tomorrow (time adv) Banaras (place adv) go-fut.
'Tomorrow, we will go to Banaras.'

मिजो :

nəktuk a:h **bənarəs** kən-kəl aŋ
Tomorrow Banaras we-go-fut.
'Tomorrow, we will go to Banaras.' (सुब्बाराव, 1995)

(ड.) सम्बन्ध कारक (genetive case) अधिकार संज्ञा (governing Noun) का पूर्ववर्ती होता है : सम्बन्ध कारक, सम्बन्ध वाचक (possession) का चिह्न है। वाक्यों में सम्बन्ध वाचक का उससे जुड़ी सम्बन्ध वाचक इकाई अनुसरण करती है या पूर्ववर्ती होती है। अंग्रेजी में इसे दो रूपों में व्यक्त किया जा सकता है परन्तु इसकी भी कुछ सीमाएं हैं :

अंग्रेजी :

Mayor of Delhi not 'Delhi's Mayor'

Father's pen not 'Pen of father'

लेकिन भारतीय भाषाओं में, वाक्यों में सम्बन्ध वाचक इकाई (possessed item) के पहले सम्बन्ध वाचक (prossessor) आता है।

हिन्दी :

दिल्ली का मेयर न कि मेयर दिल्ली का

Delhi of Mayor Mayor Delhi of

Mayor of Delhi/Delhi's Mayor

पिता जी का पैन न कि पैन पिता जी का

Father's pen Pen father of

तेलुगु :

dili yɔkka: meyru

Delhi of mayor

'Mayor of Delhi/Delhi's mayor'

(च) विशेषण सदैव तुलना का अनुसरण करता है - तुलना करने वाले वाक्यों में तुलनात्मकता का चिह्न (परसर्ग) पहले आता है और उसके बाद तुलना की जाने वाली विशेषता आती है। जैसे :

हिन्दी :

राम श्याम से लम्बा है

Ram Shyam from tall is

Ram is taller than Shyam'

उपर्युक्त उदाहरण में गुण 'लम्बाई' की तुलना की गई है गुण - लम्बाई (tall-ness) और तुलनात्मक चिह्न 'से' (from/than) है। कर्त्ता-कर्म-क्रिया क्रम (SOV) भाषाओं में तुलना चिह्न की स्थिति निर्धारित करता है अर्थात् गुण/विशेषता से पहले तुल्य इंगित किया जाता है। यह ध्यान देने योग्य है कि इस वाक्य को अंग्रेजी में अनुवाद करने पर 'than' के पहले 'taller' आता है। यही क्रम द्रविड़ और तिब्बत-बर्मन भाषाओं में भी है। ऊपर दिए गए कर्त्ता-कर्म-क्रिया (SOV) प्रकार्य के अतिरिक्त भी आधुनिक भारतीय भाषाओं के बीच अनेक सामान्य अभिलक्षण है। भारत को एक भाषायी क्षेत्र कहा जाता है। क्योंकि यहां भाषाओं में कई सामान्य अभिलक्षण हैं। इमेन्यू (Emeneau, 1980) परिभाषित करते हैं कि भाषायी क्षेत्र एक ऐसा क्षेत्र है जिसमें एक से अधिक भाषा परिवारों से सम्बन्ध रखने वाली भाषाएँ आती हैं किंतु वे ऐसी विशेषताएं प्रदर्शित करती हैं जो उन परिवारों की अन्य भाषाएँ प्रदर्शित नहीं करतीं।

निषेध के प्रयोग और प्रश्न निर्माण के बारे में बात करने के अतिरिक्त यहां हम व्याख्यात्मक संयुक्त क्रियाओं और संयोजी कृदन्त विशेषणों की भी चर्चा करेंगे।

संयोजी कृदन्त विशेषण (Conjunctive Participle)

किसी भी भाषा में दो उपवाक्यों (Clauses) को जोड़कर जटिल वाक्य बनाया जा सकता है। यह संयोजक (Conjunction) के प्रयोग से होता है। जब एक क्रिया को संयोजक के स्थान पर आश्रित क्रिया के रूप में प्रयोग किया जाता है तो उसे संयोजी कृदन्त विशेषण (CP) कहते हैं। संयोजी कृदन्त विश्लेषण क्रिया को परिवर्तित कर देते हैं इस प्रकार इनमें क्रिया विशेषण प्रकार्य होते हैं। ज्यादातर भारतीय-आर्य भाषाओं में 'कर' 'to do' क्रिया का प्रयोग इसी के लिए होता है।

हिन्दी :

मैं खाना खाकर सो गया।

I food eat - CP sleep go + tense

'Having eaten food, I slept.'

बजाय :

मैनें खाना खाया और सो गया

I food eat + tense and sleep go + tense.

'I ate my food and slept.'

यहाँ हिन्दी में तो इस प्रकार की संरचना सम्भव होती है परन्तु अंग्रेजी में ऐसा सम्भव नहीं है। इसलिए अनुवाद अजीब लगता है। जैसे :

मैं घर जाकर, साबुन से हाथ धो कर, खाना खाकर, कपड़े बदल कर, सो गया।

I home go-CP, soap with hand was-CP, food eat-CP, clothes change-CP, sleep go.

I, after reaching home, having washed hands with soap, eaten food, changed clothes, went to sleep.

द्रविड़ भाषाओं में भी इसी तरह की संरचनाएं मिलती हैं। लेकिन भारतीय-आर्य भाषाओं के विपरीत ये भाषाएँ क्रिया में काल (tense) चिह्न की अनुमति देती हैं अर्थात् क्रिया का अपने मूल रूप में होना आवश्यक नहीं होता।

कन्नड़ (Kannada)

ma|e **band-u** kere tumbitu
rain **come-pst-CP** tank fill-pst

'The tank filled as a result of rain'

व्याख्यात्मक संयुक्त क्रियाएं (explicator compound verb) :

संयुक्त क्रियाओं में कम से कम दो क्रियाएं (V_1+V_2) होती है। V_1 मुख्य क्रिया होती है जिसका शाब्दिक अर्थ होता है। तथा V_2 मुख्य क्रिया नहीं होती है। यह बिना शाब्दिक अर्थ के होती है लेकिन वाक्य में कर्त्ता के वचन (number) और लिंग (gender) तथा काल एवं मुख्य क्रिया के प्रतिरूप के रूप में (विभिन्न प्रत्ययों के साथ) सूचना देती है। मुख्य क्रिया इन सूचनाओं को नहीं देती बल्कि एक आधार रूप में प्रस्तुत होती है। ज्यादातर V_2 क्रियाएं होती हैं - देना (give), लेना (take), जाना (go), आना (come) और बैठना (sit)।

जैसे -

हिन्दी :

बोतल टूट गई।

bottle break go –+pst

'bottle broke' (perfective)

मलयालम :

kuppi **poṭṭi pooyi**

bottle break go+pst

'bottle broke'(perfective) (अब्बी, 2001)

यह ध्यान देने योग्य है कि भारतीय भाषाओं में केवल एक खास V_2 एक विशिष्ट V_2 के साथ ही व्याख्यात्मक संयुक्त क्रिया बना सकती है। साथ ही व्याख्यात्मक (explicators) समान प्रकार के अर्थ को बताते हैं। इनसे विभिन्न व्यवहारात्मक अर्थ अभिव्यंजित होते हैं जैसे कि विनम्रता, आदर, अपमान, क्रोध और आश्चर्य के चिह्नक जो वक्ता या वाचक सम्बन्धित कर्त्ता या कार्य के प्रति महसूस करते हैं। आशात्मक अर्थ निपुणता, पूर्णता के भाव की अभिव्यक्ति के लिए होता है, क्रिया विशेष उपप्ररूप ढंग/रीति को इंगित करने के लिए।

(अब्बी, 1994 : 46)

जैसे :

हिन्दी :

व्यवहारात्मक (Attitudnal)

वो क्या कर बैठी निराशा, दुःख

She what do sit.

What did she do!

जो करना है कर ले - अपमान, चुनौती

That do is do take

Do whatever u want to.

आशात्मक (Aspectual)

कर ले - 'do take' जैसे - चल काम कर ले
Come do the work

कर दे - 'do give' जैसे - मेरा काम कर दे
Please do my work

कर आ - 'do come' जैसे - दरवाजा बन्द कर आ
go shut the door and come

एक टैग (tag) की तरह स्वीकृति (Conformation) के लिए नकारात्मक (Negation) का प्रयोग टैग प्रश्न एक प्रकार का प्रश्न ही है जो उत्तर की अपेक्षा नहीं करता या सीमित विकल्प छोड़ता है। टैग प्रश्नों का निर्माण घोषणात्मक (declarative) कथनों में प्रश्नात्मक तत्वों को जोड़कर किया जाता है। जैसे :

You are not going to the market, are you?

तुम बाजार नहीं जा रहे हो, नही ना?

He reads a lot of books, does not he?
वह बहुत सारी किताबें पढ़ता है, है ना?

She will return the book, won't she?
वह पुस्तक लौटायेगी, है ना?

यहां ध्यान देने योग्य है कि अंग्रेजी में प्रश्न बनाने के लिए सहायक क्रिया, सर्वनाम और नकारात्मक आदि का ध्यान रखना पड़ता है। यदि घोषणात्मक (declarative) भाग में इनकार नहीं आया है तो टैग में इनकार होना चाहिए और यदि वाक्य में नकारात्मक निपात है तो प्रश्न बिना 'नकारात्मक' टैग के होगा।

जैसे :

हिन्दी में :

तुम कल आओगे, है ना?
you tomoroow come, Aux Neg?
'you will come tomorrow, wont you?'

उसने किताब नहीं दी, है ना?
he/she book Neg give, Aux, Neg?
He/she did not give book, isn't it?

दोनों वाक्यों में 'है ना' टैग है जो समान है। इसका एक ही कार्य होता है - घोषणात्मक वाक्यों में जो पहले ही कहा गया है उसकी स्वीकृति करना। यह सीमित 'टैग' एक क्षेत्रीय अभिलक्षण है और बहुत गत्यात्मक है। इसकी योजना सरल है तथा लगभग सभी भारतीय भाषाओं में इसका प्रयोग बहुत बड़े स्तर पर किया जाता है।

6.2.4 समाजशास्त्रीय और व्यावहारिक व्यवस्था

उपर्युक्त सभी चर्चाएं भाषिक स्तरों (Linguistic levels) पर की गईं लेकिन व्यावहारिक स्तर भी भाषिक अध्ययन का एक महत्वपूर्ण पक्ष है। क्योंकि अंततः भाषा, समाज में सम्प्रेषण का माध्यम है। समाज की सभ्यता और समाज व्यवहार ये सभी भाषा द्वारा ही सम्प्रेषित किए जाते हैं। भाषा का अस्तित्व किसी खाली जगह (Vaccum) या व्याकरण की पुस्तकों में नहीं होता है वरन् **भाषा प्रोक्ति** (discourse) के रूप में विद्यमान रहती है। इस प्रकार भाषा के व्याकरण के नियम सम्बन्धित समाज **की पद्धतियों और मान्यताओं द्वारा** अनुशासित होते हैं।

(अब्बी 2001 : 226)

किसी व्यक्ति के प्रति हमारे मत, धारणा और **मूल्यांकन** उसकी भाषा से ही तैयार हो जाते हैं। भाषा का समाजशास्त्रीय अध्ययन उस समुदाय की सामाजिक मान्यताओं और मूल्यों के बारे में महत्वपूर्ण जानकारी दे सकता है।

इस संदर्भ में देखें तो अनेक भाषाविदों ने मार्गदर्शक सिद्धांतों की ओर संकेत किया है जिनसे भाषिक निर्णय लेने में मदद मिलती हैं। संबोधन और सम्बन्ध शब्दों के मामले में हमारा निर्णय कई तथ्यों से जुड़ा होता है जैसे कि संबोधन या सम्बन्ध के वक्ता और श्रोता के बीच सामाजिक स्तर अर्थात् व्यवसायिक स्तर, शिक्षा, उम्र की समानता या असमानता, उन दोनों के बीच आत्मीयता, और सबसे महत्वपूर्ण है वार्ता/प्रोक्ति का स्थान अर्थात् बातचीत व्यक्तिगत तौर पर हो रही है या सामूहिक/सार्वजनिक क्षेत्र में।

ज्यादातर भारतीय भाषाओं में मध्यम पुरुष (II person) सर्वनाम के तीन रूप मिलते हैं हिन्दी में 'तूं', 'तुम' और 'आप' का प्रयोग क्रमशः 'छोटे' तथा उससे बड़े और सम्माननीय व्यक्ति के लिए प्रयोग किया जाता है। निम्नलिखित वाक्यों में इस प्रयोग को देख सकते हैं :

1. तू कहां जा रहा है? 'where are you going?'
2. तुम कहां जा रहे हो? 'where are you going?'
3. आप कहां जा रहे हैं? 'where are you going?'

यहां ध्यान देने योग्य है कि अंग्रेजी के तीनों वाक्य समान हैं। अंग्रेजी वाक्यों में यह विश्लेषण करना कठिन होता है कि वक्ता, श्रोता से बड़ा है। उसका दोस्त है या फिर नौकर आदि। लेकिन हिन्दी इस मामले में धनी भाषा है। 'तू' का प्रयोग तब किया जाता है जब वक्ता, श्रोता से छोटा हो या फिर (श्रोता की) उसकी सामाजिक-आर्थिक स्थिति निम्न हो। 'तू' का प्रयोग बच्चों द्वारा अपने दोस्तों के लिए भी किया जाता है। सामान्यतः तुम का प्रयोग दोस्तों, परिवार एवं उम्र के साथ एवं जिनकी सामाजिक-आर्थिक स्थिति समान हो उनके लिए भी किया जाता है, 'आप' का प्रयोग अपने से बड़ों एवं किसी को सम्मान देने के लिए किया जाता है।

यद्यपि हिन्दी प्रणाली प्रदर्शनात्मक है किंतु इसका अर्थ यह नहीं है कि यह विस्तारपूर्ण है। कुछ भाषाएँ जैसे मैथिली में और भी जटिल संसर्ग पाए जाते हैं।

नम्रता (politeness) और सम्मान की सूचना देने के लिए भारतीय भाषाओं में क्रियाओं में प्रत्ययों को जोड़ा जाता है। वक्ता एवं श्रोता के बीच सामाजिक-आर्थिक सम्बन्धों के आधार पर हिन्दी में किसी भी क्रिया रूप को तीन प्रकार से चिह्नित किया जा सकता है। उदाहरणार्थ हिन्दी क्रिया में 'to take' को तीन रूपों में बोला जा सकता है - ले, लो, लीजिए आदि।

इसके अतिरिक्त अतिरिक्त सम्बोधन भी होते हैं, विशेषकर उन समाजों में जहां विवाहित स्त्रियों को अपने पति को उसके नाम से पुकारना मना होता है। इस अनिश्चित परिस्थिति का सामना करने के लिए पत्नियां ज्यादातर अप्रत्यक्ष सम्बोधन का प्रयोग करती हैं जैसे - 'क्या आप सुन रहे हैं?' (are you listening) 'जरा देखो' (see a little) आदि साथ ही हम 'तुम करो' जैसी वाक्य संरचनाओं के स्थान पर ' चलो, हम करते हैं' का प्रयोग करते हैं।

6.3 सारांश

इस अध्याय में हमने भारत के चार परिवारों के विभिन्न अभिलक्षणों का परीक्षण एवं अध्ययन किया। ये अभिलक्षण इन समूहों की अद्वितीयता (uniqueness) और विशिष्टताओं को बताते हैं किंतु साथ ही ये चारों भाषा परिवार 'भारतीयता' भी रखते हैं अर्थात् वे समान अभिलक्षण जो भाषाओं के ब्रह्माण्ड में भारतीय उपमहाद्वीप को एक विशिष्ट स्थान देते हैं। सम्पर्क और मेल के कारण द्विभाषिकता, बहुभाषिकता एवं भाषायी शब्दों का आदान-प्रदान आदि सम्भव हो सका है। दूसरे शब्दों में कहें तो ये भाषाएँ भारतीय एकीकरण एवं समायोजन के उदाहरण हैं जो हमारी जीवनशैली, सभ्यता और समाज को एक आकार एवं आधार प्रदान करती है। यहां नीचे सारणी में कुछ अभिलक्षणों की सूची बनाई गई है। यद्यपि यह सूची विस्तारपूर्ण नहीं है :

ध्वनि व्यवस्था (Sound System)	1. (Retroflexion) मूर्धन्यीकरण 2. (Aspiration of Voiceless stop) अघोष स्पर्श का महाप्राण
रूपिमिक व्यवस्था (Morphological System)	1. (Reduplication for word information) शब्द निर्माण के लिए पुनरूक्ति
वाक्यीय व्यवस्था (Syntactic System)	1. (Verb final languages) क्रिया अन्तिम भाषाएँ 2. (Conjunctive participle) संयोजी कृदन्त विश्लेषण 3. (Explicator Compound words) व्याख्यात्मक संयुक्त शब्द 4. (Negation used as Tag for Conformation) स्वीकृति के लिए 'नही' का प्रयोग टैग की तरह
संकेत प्रयोगिकी व्यवस्था (Pragmatic System)	(Politeness feature) विनम्रतापूर्ण अभिलक्षण 1. (Honorific Personal Pronoun) सम्मान सूचक व्यक्तिगत सर्वनाम 2. (indirect address terms) अप्रत्यक्ष संबोधन पद

अगली इकाई में हम आधुनिक भारतीय भाषाएँ और अनुवाद की पद्धतियों के विषय में विस्तार से अध्ययन करेंगे।

6.4 अभ्यास के लिए प्रश्न

1. ऑस्ट्रो-एशियाटिक भाषाओं के विशिष्ट अभिलक्षण क्या है?
2. क्या आप समझते हैं कि ये भाषाएँ अपनी विशिष्टता खोती जा रही हैं? क्यों/क्यों नहीं?
3. 'भारत एक भाषायी क्षेत्र' पर एक निबन्ध लिखिए।
4. कर्त्ता-कर्म-क्रिया भाषाओं की विशेषताएँ क्या हैं?
5. आधुनिक भारतीय भाषाओं की स्वनिमिक व्यवस्था को विस्तार से समझाइए।
6. आधुनिक भारतीय भाषाओं की रूपिमिक व्यवस्था को विस्तार से समझाइए।

6.5 कुछ उपयोगी पुस्तकें

- Abbi, A. 1994. *Semantic Universal in Indian Languages*. Shimla, Indian Institute of Advanced Study.
- Abbi, A. 2001. *A Manual of Linguistic Field Work and Structures of Indian Languages*. Lincom Europa.
- Bhat, D.N.S.1997. Noun and Verb Distinction in Munda Languages. In A. Abbi ed. *Languages of Tribal and Indigenous People of India The Ethnic Space*. Motilal Benarsidass Publishers, Delhi.
- Chomsky, N. 1975. *Reflections on Language*. New York, Pantheon.
- Emeneau, M.B.1980. *Language and Linguistic Area*. Essays by Murray B. Emeneau. Selected by Anwar S. Dil. Strandford, Strandford University Press.
- Greenberg, Joseph H.1963. Some Universals of Grammar with Particular References to the Order of Meaningful Elements. In Joseph Greenberg ed. *Universals of Language*. 73-113. Cambridge. MIT Press.
- Hockett, C.F. 1963. *A Course in Modern Linguistics*. New York, Macmillan.
- Krishanmurthi, Bh.1998. Telugu. In Steever ed. *The Dravidian Languages*. London and New York Routledge.

इकाई 7 आधुनिक भारतीय भाषाएँ तथा अनुवाद की पद्धतियाँ

इकाई की रूपरेखा

7.0 उद्देश्य

7.1 प्रस्तावना

7.2 आधुनिक भारतीय भाषाएँ तथा अनुवाद की पद्धतियाँ

- 7.2.1 समतुल्यता का सिद्धांत
- 7.2.2 आधुनिक भारतीय भाषाएँ : समतुल्यता एवं अनुकूलन
- 7.2.3 प्रतिरोध का सिद्धांत
- 7.2.4 मध्यस्थ के रूप में सामान्य भाषा की भूमिका

7.3 अनुवाद पद्धतियां और प्रकाशन उद्योग की भूमिका

7.4 सारांश

7.5 अभ्यास के लिए प्रश्न

7.6 कुछ उपयोगी पुस्तकें

7.0 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप :

- आधुनिक भारतीय भाषाओं से सम्बन्धित अनुवाद की मुख्य पद्धतियों के बारे में जान सकेंगे;
- उस विशेष संदर्भ पर चर्चा कर सकेंगे जिसमें किसी पद्धति को लागू किया गया हो;
- इस इकाई में बताई गई अनुवाद की पद्धतियों के लाभ एवं कमियों को जान सकेंगे; और
- यह निर्दिष्ट कर सकेंगे कि किसी मूल पाठ का अनुवाद करते समय किस पद्धति का प्रयोग किया जाए।

7.1 प्रस्तावना

खंड 1 में आप पढ़ चुके हैं आधुनिक भारतीय भाषाओं से हमारा क्या तात्पर्य है, वे कौन सी प्रक्रियाएं हैं जिनके कारण उन्हें आधुनिक भारतीय भाषाओं के रूप में जाना जाता है, और उन भाषायी परिवारों के बारे में जिनसे ये आधुनिक भारतीय भाषाएँ सम्बन्धित हैं तथा वे मानदंड क्या हैं जिनके आधार पर इस तरह का वर्गीकरण होता है। इस पाठ्यक्रम के खंड 2 में हमने आधुनिक भारतीय भाषाओं के बीच अंतःक्रिया की प्रकृति के बारे में चर्चा की। इस इकाई में हम उन प्रमुख सिद्धांतों की चर्चा करेंगे जो किसी भी मूलपाठ, विशेषकर साहित्य पाठ का एक आधुनिक भारतीय भाषा से दूसरे में अनुवाद करते समय ध्यान में रखा जाता है। इस इकाई में अनुवाद पद्धतियों के साथ अनुवाद की रणनीतियों पर चर्चा से आपको भारतीय साहित्य एवं भूमण्डलीय साहित्य में अनुवाद प्रक्रिया को भी समझने में मदद मिलेगी। इनकी विस्तृत चर्चा पाठ्यक्रम एम.टी.टी. 016 में करेंगे।

इससे पहले कि हम आधुनिक भारतीय भाषाओं में अनुवाद की पद्धतियों पर चर्चा करें, आइये, अनुवाद के सिद्धांतों को याद करने की कोशिश करें जिसकी चर्चा पाठ्यक्रम 1 में की गई है। पाठ्यक्रम 1 में हमने अनुवाद के कुछ प्रमुख सिद्धांतों की चर्चा की, जिनका प्रयोग अनुवाद के दौरान किया जाता है। हमने सम्बन्धित सिद्धांतों एवं रणनीतियों के लाभ और उनकी कमियों के बारे में भी बताया। इस इकाई में हम पढ़ेंगे (क) प्रायोगिक अनुवाद में सिद्धांतों एवं उनकी रणनीतियों का प्रयोग और (ख) क्या विशेषकर भारतीय संदर्भ में सिद्धांतों के निर्माण में भारतीय संदर्भ सहायक रहा है और क्या उस सम्बन्ध में भूमण्डलीय संदर्भ में अनुवाद सिद्धांतों के विकास में उसने योगदान दिया है।

7.2 आधुनिक भारतीय भाषाएँ तथा अनुवाद की पद्धतियाँ

भारत में अनुवाद आधुनिक भारतीय भाषाओं के विकास का अभिन्न घटक है। इस प्रक्रिया के दो पहलू हैं, (क) आधुनिक भारतीय भाषाओं का विकास और आधुनिक समय से पहले अनुवाद की भूमिका (ख) आधुनिक भारतीय भाषाओं का विकास एवं आधुनिक समय में अनुवाद की भूमिका। पाठ्यक्रम 1 और पाठ्यक्रम 2 में आपने जो पढ़ा उसके आधार पर आप इस संदर्भ में इन दो कालावधियों के बीच प्रमुख अंतर जान सकेंगे।

इन दो कालावधियों में प्रयोग की गई अनुवाद प्रक्रियाओं या पद्धतियों के बीच एक प्रमुख अंतर अनुकूलन एवं उचित अनुवाद है। आधुनिक भारतीय भाषाओं के विकास का इतिहास आम तौर पर 8वीं-9वीं सदी के बीच माना जाता है। आधुनिक समय से पहले अनुवाद की प्रक्रिया में जहां अनुकूलन अथवा पुनःसृजन की रणनीति का व्यापक रूप से इस्तेमाल होता था, वहीं आधुनिक समय में अनुकूलन के बजाय 'अनुवाद का अधिक इस्तेमाल किया गया है। उपर्युक्त मुद्दों पर हम पाठ्यक्रम 1 और पाठ्यक्रम 2 में पहले ही चर्चा कर चुके हैं। इस प्रकार, आधुनिक भारतीय भाषाओं के ऐतिहासिक विकास में अनुकूलन एवं अनुवाद दोनों की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। इस इकाई में हम केवल आधुनिक कालावधि पर ध्यान केंद्रित करेंगे।

आधुनिक कालावधि पर ध्यान केंद्रित करते हुए हम चार प्रमुख तत्वों की चर्चा करेंगे जो भारत में अनुवाद प्रक्रिया की विशेषताएं हैं अथवा अनुवाद पद्धतियों को प्रभावित करते हैं। ये चार तत्व हैं (क) समतुल्यता का सिद्धांत, (ख) प्रतिरोध का सिद्धांत, (ग) सामान्य भाषा की मध्यस्थ के रूप में भूमिका और (घ) प्रकाशन उद्योग की भूमिका।

7.2.1 समतुल्यता का सिद्धांत

आधुनिक भारतीय भाषाओं के बीच अनुवाद में समतुल्यता के सिद्धांत का व्यापक रूप से इस्तेमाल हुआ है। हम (पाठ्यक्रम 1 में) नाइडा और भाषिक समतुल्यता पर चर्चा कर चुके हैं, हमने दो घटकों को रेखांकित किया है जो समतुल्यता के सिद्धांत में काफी महत्वपूर्ण हैं। ये हैं (क) मूल भाषा (एसएल) और लक्ष्य भाषा (टीएल) के बीच गहरी तथा सतही संरचनाओं में सम्बन्ध और (ख) सतत समतुल्यता पर जोर। ये दोनों घटक मिलकर अनुवाद का 'विज्ञान बनाते हैं, जैसा कि नाइडा ने कहा है। नाइडा का सिद्धांत 1960 के दशक में आया। हालांकि, आधुनिक भारतीय भाषाओं में अनुवाद नाइडा के सिद्धांत के पहले से होता रहा है। इसलिए समतुल्यता के सिद्धांत को ऐसा साधन समझा जा सकता है, जो हमें 19वीं सदी से पहले आधुनिक भारतीय भाषाओं के बीच अनुवाद की प्रक्रिया को समझने में मदद देता है।

समतुल्यता के सिद्धांत पर किसी भी चर्चा के केन्द्र में भाषा का सवाल है, क्योंकि हम जिस बारे में जानकारी प्राप्त करना चाहते हैं वह दो या इससे अधिक भाषाओं के बीच भाषिक समतुल्यता है। यदि कोई दो भाषाओं के बीच भाषिक समतुल्यता की खोज कर रहे हैं और यदि उनके बीच अनुवाद में समतुल्यता का प्रयोग हुआ है, तो यह समझा जाएगा कि ऐसी समतुल्यता मौजूद है। ऐसे में अगला प्रश्न यह है कि इस तरह की समतुल्यता किस प्रकार अस्तित्व में आती है? इस इकाई में हम जानेंगे कि आधुनिक भारतीय भाषाओं के मामले में ऐसी समतुल्यता किस प्रकार अस्तित्व में आती है। भारतीय उपमहाद्वीप में लगभग तीन हजार वर्ष के लेखन के निरंतर इतिहास का परिणाम ऐसी ऐतिहासिक परिस्थिति के रूप में सामने आया है जिसमें भाषा समाभिरूपता एवं कूट सम्मिश्रण अस्तित्व में आया। इस प्रक्रिया को समझने के लिए दो उदाहरण लेते हैं। अबीदी और गर्गेश (2008:120) ने इसका उल्लेख भारत में फारसी भाषा के मामले में किया है। यदि फारसी और अन्य भारतीय भाषाएँ एक-दूसरे में भाषिक समतुल्यता ढूंढ सकीं, तो यह उनके बीच, विशेषकर 13वीं सदी के बाद ऐतिहासिक सम्बन्ध की प्रक्रिया से ही सम्भव हो सका। उन्होंने बताया, 'अकबर के समय से ही और उसके बाद भारतीय संस्कृति एवं माहौल की स्पष्ट छाप दिखने लगी, जिसमें भारतीयकृत फारसी को सबक-ए-हिन्दी (भारतीय शैली) बताया जाने लगा। इसके दो अर्थ हैं पहला, यह अलंकृत में शैली है जो इसे सबक-ए-खुरासनी और सबक-ए-इराकी या ईरानी से अलग करता है। दूसरा, भारतीय शब्दों एवं अभिव्यक्तियों ने अलग शैली बनाई (राशिदः 1996)।' (पूर्वोक्त 109) फिर इसके भाषा में प्रभाव के क्या परिणाम हुए? अबीदी और गर्गेश बताते हैं कि प्रभाव शाब्दिक और संश्लेषित

दोनों पड़े। शाब्दिक स्तर पर, उन्होंने शाहजहां के समय से 130 शब्दों का उदाहरण दिया। उनके अनुसार, 'शब्दावली का सम्मिश्रण न केवल स्थानीय रंग देता है, बल्कि स्थानीय सांस्कृतिक तत्वों की अभिव्यंजकता भी देता है। सम्मिश्रण शब्दावली को सामाजिक-सांस्कृतिक संदर्भ में संकेत भी उपलब्ध कराता है। (पूर्वोक्त 110) अबीदी और गर्गेश यह भी कहते हैं, 'फारसी और हिन्दी के साथ संयोजित स्वरूप भी देखने को मिलते हैं। कुछ उदाहरण हैं राग सुरैया (संगीत के राग का नाम), राग खावां (राग-गायक), राग बसंत (राग का नाम), पायी दर्शन (पांव देखना-सम्मान देना) और गीत ख्वानी (गीत गाना) पहले तीन यौगिक में पहला शब्द राग हिन्दी से है और दूसरा फारसी से। चौथे उदाहरण में पहला शब्द फारसी से है और दूसरा हिन्दी से और पांचवें में यह क्रम उलटा है। '(पूर्वोक्त 112) संश्लेषित परिवर्तन के सम्बन्ध में वे कहते हैं, 'भारतीय फारसी में परम्परागत फारसी की तुलना में क्रिया के साथ अनेक विषय के समझौते अधिक स्वीकार्य हैं, क्योंकि भारतीय भाषाओं में आम तौर पर विषय और क्रिया के बीच समझौता होता है।' (पूर्वोक्त 113) आगे वे अमीर खुसरो के दोहे में कूट सम्मिश्रण और कूट परिवर्तन का उदाहरण देते हैं और उन्हें सम्प्रेषणीय रणनीति के भाग के रूप में देखते हैं।

अबीदी और गर्गेश यह भी बताते हैं कि भारतीय भाषाएँ किस प्रकार शब्दावली एवं वाक्य विन्यास में फारसी से प्रभावित हुई हैं। भाषायी घालमेल की उपर्युक्त प्रक्रिया का यह परिणाम है कि दो भाषाएँ पाठ के अनुवाद के उस उपलब्ध संघटन के जरिये अपनी क्षमताएं साझा करती हैं, जिसके माध्यम से दो भाषाओं में अनुवाद किया जाता है। आपको खास तौर पर मुगलकाल में किए गए बहुत से अनुवादों से परिचित होना चाहिए। यह उल्लेखनीय है कि अनुवाद एवं भाषायी सम्मिश्रण के बीच सम्बन्ध द्वंद्वात्मक प्रक्रिया थी। अनुवाद गतिविधियों ने भाषाओं के बीच अंतःक्रिया को बढ़ाने और समतुल्यता के साझा संघटन में भी योगदान दिया। लेकिन उसी समय, भाषाओं में समतुल्यता के इस साझा संघटन के विकास ने अनुवाद प्रक्रिया को भी आगे बढ़ाया।

एक अन्य उदाहरण की ओर बढ़ते हैं। यदि अनुवाद में भारतीय-आर्य और द्रविड़ भाषा परिवारों के बीच समतुल्यता के सिद्धांत का इस्तेमाल किया गया है तो हम एक बार फिर भाषायी व्याकरण के साझा संघटन के मुद्दे की चर्चा करते हैं जो सिद्धांत का प्रयोग सम्भव बना सकता है। एस. एन. श्रीधर ने इस बारे में पूर्ण जानकारी प्रदान करने की कोशिश की है कि साझा भाषायी व्याकरण किस प्रकार दो भाषा परिवारों के बीच ऐतिहासिक रूप से विकसित हुआ। (श्रीधरः 2008: 235-252)। व्याकरण के स्तर पर श्रीधर ने शब्दावली, आकृति-विज्ञान और वाक्य विन्यास में प्रभाव की सूची तैयार की है। उनका कहना है कि संस्कृत, प्राकृत जैसी भारतीय-आर्य भाषाओं से लिए गए शब्द द्रविड़ भाषा में बड़ी संख्या में हैं। लेकिन वे कहते हैं, 'प्रथम, अन्य भाषाओं से लिए गए शब्द किसी शब्दावली या शब्दावलियों में प्रतिबंधित नहीं हैं, वे सभी जगह बोले जाते हैं- मौलिक के साथ-साथ तकनीकी संदर्भ में भी; द्वितीय, ये उधार के शब्द विषय-वस्तु के शब्दों तक प्रतिबंधित नहीं हैं, बल्कि इसमें कार्य शब्दों की बड़ी संख्या शामिल है, जैसे – 'परिमाणक, तीव्र करने वाला; तीसरा, संस्कृत के बहुत से शब्द उनके मूल स्वरूप और व्युत्पन्न रूप में लिए गए हैं।' (पूर्वोक्त 241) आकृति-विज्ञान के बारे में श्रीधर का कहना है, 'सर्वाधिक आश्चर्यजनक विशिष्टता है भारतीय-आर्य व्युत्पन्न संयोजन का बड़ी संख्या में लाभदायक इस्तेमाल।' (पूर्वोक्त 242) शब्दावली के बारे में उन्होंने कहा, 'हालांकि संस्कृत के मॉडल पर आधारित व्याकरण सम्मत प्रतिमानों की चर्चा समय-समय पर बहुत से लेखक करते रहे हैं, लेकिन कुल मिलाकर, समसामयिक द्रविड़ भाषा में भारतीय-आर्य प्रभाव के कुछ व्याकरण सम्मत लक्षण ढूंढे जा सकते हैं।' (पूर्वोक्त 244) हालांकि उनका कहना है, 'भारतीय-आर्य के साथ दिन-प्रतिदिन के सम्पर्क में गैर-साहित्यिक भाषाएँ व्याकरण सम्मत प्रभाव से व्यापक ग्रहणशीलता दिखाती हैं।' (पूर्वोक्त 244)

दो भाषा परिवारों के बीच साझा भाषायी विशेषताएं क्या हैं, इस बारे में उदाहरणों का उल्लेख करने के बाद श्रीधर इस पर भी चर्चा करते हैं कि यह तथ्य किस प्रकार ऐतिहासिक रूप से सामने आया। इस सम्बन्ध में उन्होंने चार कारकों का उल्लेख किया है। पहला, संस्कृत का प्रभाव कर्मकाण्डी भाषा और काफी समय पहले कुछ अदालतों में अदालती भाषा के सम्बन्ध में था। दूसरा, वे जन विद्वानों के स्थानांतरण और उनके द्वारा द्रविड़ भाषाओं में प्राकृत शब्दों के इस्तेमाल का जिक्र करते हैं। वे कर्नाटक का उदाहरण देते हैं, जो 'जन शरणार्थियों के लिए स्वर्ग जैसा था। द्रविड़ भाषाओं में बहुत से ख्यात लेखक जन थे जो प्राकृत में भी समान रूप से निपुण और स्वाभाविक थे (उदाहरणस्वरूप नेमिचंद्र)। इसी तरह, बहुत से प्राकृत लेखकों ने भी द्रविड़ भाषाओं में लिखा। उदाहरण के

लिए, पुष्पदंत, त्रिविक्रम और शाक्तयान, जिन्होंने कन्नड़ में लिखा।' (पूर्वोक्त 237) तीसरा, हिन्दी-उर्दू और मराठी जैसी भारतीय-आर्य भाषाओं ने भी द्रविड़ भाषाओं को प्रभावित किया जो एक-दूसरे के काफी निकट हैं। वे महाराष्ट्र, कर्नाटक और आंध्र प्रदेश के बीच सीमा क्षेत्र का उदाहरण देते हैं, जहां गहन कूट सम्मिश्रण व्यापक तौर पर आम है। चौथा, वे तर्क देते हैं कि दो भाषा परिवारों के बीच कूट सम्मिश्रण शैली, वर्ग एवं भाषण के शीर्ष के आधार पर अलग-अलग होती हैं। भारतीय-आर्य का प्रभाव द्रविड़ के भाषण स्वरूप की तुलना में लेखन में कहीं अधिक है, और लेखन में भी गद्य की तुलना में पद्य में प्रभाव अधिक है। भाषण के विषय में वे कहते हैं कि जहां संस्कृत का प्रभाव धार्मिक, कविता सम्बन्धी प्रवचन इत्यादि में अधिक है, वहीं हिन्दी-उर्दू (या फारसी अरबी) भाषा कानून, भूमि राजस्व, घुड़सवारी और कुश्ती इत्यादि में अधिक लोकप्रिय है।

आइए एक अन्य उदाहरण लें कि साझा भाषिक और सांस्कृतिक विशेषताओं की उपर्युक्त परिस्थितियां किस प्रकार आधुनिक भारतीय भाषाओं के बीच अनुवाद में सहायक होती हैं। इसका उदाहरण प्रेमचंद की लघु कहानियों का असमी भाषा में अनुवाद है (इंदिरा गोस्वामी द्वारा अनुवादित और नेशनल बुक ट्रस्ट की ओर से 1975 में प्रेमचंदर सुती गल्प के शीर्षक से प्रकाशित)। अनुवादित कहानियों में से एक कहानी प्रेमचंद की 'कफन' है। इस कहानी का सामाजिक-आर्थिक संदर्भ 'चमार जाति, जमींदार, गांव के ऋणदाता या बनिया के सामाजिक वर्गीकरण के साथ-साथ 'चमार' जाति के परिवार के जीवन का भी जिक्र करता है। हमारे लिए महत्वपूर्ण यह है कि असम में जमींदार या 'चमार' जाति (आम तौर पर अछूत) के ऐतिहासिक साक्ष्य बहुत कम हैं। ग्रामीण ऋणदाता या बनिया की श्रेणी भी असम में आधुनिक समय से पहले परम्परागत सामाजिक वर्ग के रूप में नहीं थी। इसके बावजूद, भाषा ने असमी भाषा में पाठकों के समक्ष इन श्रेणियों को अभिव्यक्त एवं सम्प्रेषित करने की क्षमता विकसित कर ली। जब यह कहता है, "वे जाति से चमार थे।" (पृष्ठ 91) तो ऐसा माना जाता है कि पाठक वर्ग को सामाजिक श्रेणी के बारे में जानकारी है। एक अन्य पंक्ति का उल्लेख इस प्रकार है, "जब गांव के जमींदार साहब ने दो रुपये दिए हों तो कोई गांव के बनिया महाजन से बच सकता है?" (पृष्ठ 97) आगे, 'मजूरी' (हिन्दी शब्द मजदूरी से) जैसे शब्दों का इस्तेमाल किया गया, क्योंकि उनमें मजदूरी की अवधारणा को सम्प्रेषित करने की क्षमता है (पृष्ठ 91)। हमारे लिए महत्वपूर्ण यह है कि किस प्रकार एक ऐसी भाषा जिसमें जमींदार, 'चमार' जाति या मजदूरी का ऐतिहासिक अनुभव नहीं है, अपनी शब्दावली में उन्हें शामिल कर सकता है और मूल भाषा के पाठ के अर्थ को सम्प्रेषणीय बना सकता है। यह सांस्कृतिक अंतःक्रिया और जो इसके ऐतिहासिक अनुभवों से सम्बद्ध न हो उसे भी अभिव्यक्त एवं सम्प्रेषित करने के लिए भाषा विकास कौशल के कारण ही सम्भव है।

भाषाएँ किस प्रकार एक-दूसरे के साथ अंतःक्रिया करती हैं और एक समय के बाद सामान्य भाषायी विशेषताएं तैयार कर लेती है, यह बताने के लिए हमने फारसी एवं भारतीय भाषाओं, भारतीय-आर्य एवं द्रविड़ भाषा परिवारों तथा हिन्दी-असमी के तीन उदाहरणों पर चर्चा की। समतुल्यता के सिद्धांत के सैद्धांतिक अध्ययन में यह आम तौर पर कहा जाता है कि (क) भाषाएँ कुछ निश्चित सामान्य समतुल्यताएं साझा करती हैं और इसलिए अनुवाद के लिए दो अलग-अलग भाषाओं में समतुल्यता (निकटता भी) ढूंढना सम्भव है (उदाहरण के लिए, रोमन जैकबसन की स्थिति) और (ख) मूल भाषा और लक्ष्य भाषा के बीच गहरी संरचना तथा सतही संरचना के जरिये (सक्रिय) समतुल्यता तक पहुंचने की प्रणाली (उदाहरणस्वरूप, यूजेन नाइडा की स्थिति)। यदि समतुल्यता का सिद्धांत इस मान्यता पर आधारित है कि विभिन्न भाषाओं के बीच भाषिक विशेषताओं का साझा संग्रह वास्तव में उपलब्ध है और दी हुई भाषाओं में अनुवाद के लिए इसका इस्तेमाल किया जा सकता है तो भारतीय उपमहाद्वीप में लम्बे समय से भाषा निर्माण तथा भाषायी अंतःक्रिया का अध्ययन इस मान्यता की वास्तविकता को उजागर करता है। यह भाषा और भाषायी अंतःक्रिया का ऐतिहासिक अनुभव है जिसमें अनुवाद में समतुल्यता के सिद्धांत को लागू करने की सम्भावनाओं को पहचानने की जरूरत है। हमें याद रखना होगा कि हालांकि सैद्धांतिक निर्माण के रूप में समतुल्यता के सिद्धांत की खोज आधुनिक पश्चिमी चिंतकों ने की है, लेकिन उपमहाद्वीप में इसका प्रयोग आधुनिक समय से पहले ढूंढ़ा जा सकता है। परंतु यह भी उल्लेखनीय है कि प्रयोग के बावजूद सैद्धांतिक निर्माण आधुनिक भारत के पहले के समय में स्पष्ट रूप से सामने नहीं आया। जी. एन. देवी ने भी अपने अध्ययन (आफ्टर एमनेशियाः 1992) में कहा है कि परम्परागत भाषाओं में सैद्धांतिक निर्माण से अलग भारतीय भाषा तथा कविता में निश्चित रूप से पिछड़ापन है। भाषा के मुद्दे के साथ-साथ हमें यह भी याद रखने की जरूरत है कि भाषा वृहद

समाज से अलग नहीं है। यदि भाषायी अंतःक्रिया एवं निर्माण की गहन प्रक्रिया होती है तो यह इसलिए है कि महाद्वीप के विभिन्न समुदायों के बीच लम्बे ऐतिहासिक समय से सामाजिक-सांस्कृतिक अंतःक्रिया की गहन प्रक्रिया चलती रही है। यदि भाषाएँ दूसरी संस्कृति की विषय-वस्तु को सम्प्रेषित करने में सक्षम हैं तो यह इसलिए है कि महाद्वीप के लम्बे इतिहास में विभिन्न संस्कृतियों के बीच आदान-प्रदान ने भाषाओं में कूट सम्मिश्रण एवं कूट परिवर्तन को अनिवार्य बना दिया है। जैसा कि हमने इस अध्याय की शुरुआत में संकेत किया है, अनुवाद इस प्रक्रिया का केवल प्राप्तकर्ता नहीं, बल्कि इस प्रक्रिया में योगदान देने वाला भी है। इसलिए, यदि आधुनिक समय में, आधुनिक भारतीय भाषाओं ने भाषा तथा सम्प्रेषण के संदर्भ में दूसरी सांस्कृतिक साम्यताओं को समझने की क्षमता विकसित कर ली है तो ऐसा समाज में सैकड़ों साल की अंतःक्रिया और एक-दूसरे को समझने के लिए साधनों (जैसे कि भाषा) के विकास के कारण ही सम्भव हो पाया।

7.2.2 आधुनिक भारतीय भाषाएँ : समतुल्यता एवं अनुकूलन

पहली इकाई में हमने दो मुद्दों पर चर्चा की, (क) आधुनिक भारतीय भाषाओं के बीच अनुवाद में समतुल्यता के सिद्धांत का व्यापक इस्तेमाल हुआ है और (ख) यह इसलिए सम्भव हो पाया, क्योंकि उपमहाद्वीप में भाषा निर्माण एवं भाषा अंतःक्रिया की ऐतिहासिक प्रक्रिया ने भाषायी विशेषताओं का एक साझा संघटन विकसित किया जो उपमहाद्वीप की भाषाओं में सामाजिक- सांस्कृतिक एवं भाषायी समतुल्यता सम्भव बना सकता है। अनुवाद की एक पद्धति के रूप में समतुल्यता के सिद्धांत का इस्तेमाल पश्चिम और भारत में किस प्रकार भिन्न है, इसका जिक्र इस लघु खंड में है।

भारत के मामले में समतुल्यता न केवल भाषा, बल्कि संस्कृति के संदर्भ में भी है। पश्चिमी दृष्टिकोण में समतुल्यता को आम तौर पर भाषा और इसकी व्यापक विशेषताओं के संदर्भ में देखा जाता है। इस तथ्य के विकास में (भाषा एवं संस्कृति में समतुल्यता) आधुनिक भारतीय भाषाओं का इतिहास अपने आप में महत्वपूर्ण है। आठवीं-नौंवी शताब्दी और 16वीं-17वीं शताब्दी के दौरान पुराण, रामायण, महाभारत और गीता के रूपांतरण अथवा लिप्यंतरण ने दक्षिण एशिया में सामान्य सांस्कृतिक संघटन बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। ये पाठ उस दौरान विकसित बहुत सी आधुनिक भारतीय भाषाओं में लिखे गए। लेकिन उन्होंने रूपांतरण अथवा लिप्यंतरण क्यों किया? हालांकि इन ग्रंथों की कथाशैली बरकरार रखी गई, लेकिन मूल पाठ से अलग भूगोल, सम्प्रेषण के तरीके या विशेषताओं इत्यादि को भी शामिल किया गया। आधुनिक भारतीय भाषाओं में ये अनुकूलन अथवा लिप्यंतरण एकल नहीं, बल्कि बहुवैकल्पिक थे। उदाहरणस्वरूप, असमी भाषा में कई रामायण लिखी गईं हैं, जो अपने ऐतिहासिक संदर्भो से अलग हैं।

विभिन्न आधुनिक भारतीय भाषाओं में महाकाव्य के उद्धरण के विस्तार की इस प्रक्रिया का एक परिणाम यह रहा कि दक्षिण एशिया में सांस्कृतिक विविधता एवं सांस्कृतिक समतुल्यता की असाधारण घटना ऐतिहासिक रूप से सामने आई। इस तथ्य से कि आधुनिक भारतीय भाषाओं का विकास इस प्रक्रिया से अभिन्न रूप से जुड़ा हुआ है, भाषाओं में समान सांस्कृतिक संघटन बनाने में मदद मिली। लेकिन यह भी तथ्य है कि वे रूपांतरण थे, न कि 'अनुवाद', अर्थात् प्रत्येक भाषा ने महाकाव्य की परम्पराओं/उद्धरण को उनके समय की ऐतिहासिक आवश्यकताओं के अनुसार अपनाया किन्तु भाषाओं के बीच समान सांस्कृतिक संघटन के निर्माण के बावजूद अंतर की सम्भावना भी रहती है।

आइये अब हम उसकी संक्षेप में चर्चा करें जिस पर हमने पिछले दो खंडों में चर्चा की। समतुल्यता के सिद्धांत पर पूर्व के खंड में हमने इस पर चर्चा की कि भाषाओं ने किस प्रकार स्वयं में अन्य सांस्कृतिक संदर्भों के लिए भाषिक व्याकरण का विकास किया। यह क्षमता अनुवाद पद्धति के संदर्भ में महत्वपूर्ण है। यह क्षमता निर्माण वृहद सामाजिक-सांस्कृतिक स्तर पर न केवल भाषाओं, बल्कि भाषा समुदायों के बीच लम्बी ऐतिहासिक अंतःक्रिया के कारण ही सम्भव हो पाई। समतुल्यता एवं रूपांतरण पर इस खंड में हमने पढ़ा कि उपमहाद्वीप में विभिन्न भाषा समुदायों के बीच भाषा निर्माण तथा विषय वस्तु का निर्माण किस प्रकार होता है, और समतुल्यता तथा अंतर किस प्रकार भाषा निर्माण एवं विषय वस्तु के निर्माण के स्वरूप में सन्निहित हैं। इस प्रक्रिया का वास्तविक परिणाम यह रहा कि समतुल्यता (जैसा कि पश्चिमी विचारों में कहा गया है) न केवल भाषा, बल्कि संस्कृति के साथ भी

लम्बे समय तक नहीं रहा। आधुनिक समय में आधुनिक भारतीय भाषाओं में विकास ने पूर्व-आधुनिक काल से पहले की प्रक्रिया में किसी बड़े बदलाव की बजाय उसे केवल संघटित किया। इसलिए अंतिम में जो हमारे साथ है, वह यह है कि (क) समतुल्यता का सिद्धांत आधुनिक भारतीय भाषाओं में अनुवाद पद्धति का एक महत्वपूर्ण घटक है, (ख) समतुल्यता प्रकृति में केवल भाषायी नहीं, सांस्कृतिक भी है, (ग) यह दोहरी समतुल्यता इसलिए है क्योंकि भाषाएँ सांस्कृतिक समतुल्यताओं के साथ-साथ अंतर के भंडार के रूप में विकसित हुईं, (घ) समतुल्यताओं एवं अंतर के कारण ही अनुवाद का मुद्दा सामने आया (केवल समतुल्यताएं या अंतर ही उपमहाद्वीप में अनुवाद के लिए मापदंड कभी नहीं रहे हैं), और (च) भाषायी और सांस्कृतिक अनुवाद की दोहरी समतुल्यता उपमहाद्वीप में सैकड़ों सालों से रहने वाले विभिन्न समुदायों के बीच अंतःक्रिया तथा आदान-प्रदान के निरंतर व लम्बे इतिहास के कारण ही सम्भव हो पाई।

7.2.3 प्रतिरोध का सिद्धांत

पहले अध्याय में हमने आधुनिक भारतीय भाषाओं में अनुवाद के लिए प्रयुक्त होने वाले समतुल्यता के सिद्धांत के बारे में पढ़ा। इस अध्याय में हम आधुनिक भारतीय भाषाओं में अनुवाद के एक महत्वपूर्ण मापदंड पर चर्चा करेंगे, जो 1980 के दशक के आखिरी वर्षों में सामने आया।

यह उपागम 'सबअल्टर्न' (उपेक्षित समुदाय) अध्ययनों के मामले में व्यापक तौर पर इस्तेमाल होता है। 'सबअल्टर्न' अध्ययन का तात्पर्य ऐसे विषय से है जो किसी भी समाज का अध्ययन हाशिये पर जी रहे समुदायों के संदर्भ में करने की कोशिश करता है। अनुवाद के सम्बन्ध में तर्क यह है कि एक 'उपेक्षित विषय के प्रभावी भाषा में अनुवाद की प्रक्रिया में मूल विषय तथा इसकी अद्वितीय सामाजिक-सांस्कृतिक विशेषताओं को प्रभावी संस्कृति में नहीं मिलाना चाहिए। दूसरे शब्दों में, उपेक्षित एवं प्रभावी संस्कृति में अंतर की राजनीति अनुवाद के इस उपागम का मुख्य कारक है। इस सम्बन्ध में उपेक्षित विषय वस्तु का उल्लेख विवरणात्मक, भाषा व्याकरण या परिदृश्य में किया जा सकता है।

उपर्युक्त तथ्य की व्याख्या हम तीन उदाहरण से कर सकते हैं। इस सम्बन्ध में एक अग्रणी अनुवाद सिद्धांती गायत्री चक्रवर्ती स्पीवाक हैं। महाश्वेता देवी के बांग्ला उपन्यासों एवं कहानियों के अपने गहन अनुवाद में उन्होंने जिस उपागम का अनुसरण किया, उसकी तीन प्रमुख विशेषताएं हैं। प्रथम, यह बांग्ला से अंग्रेजी में अनुवाद है, अर्थात् महानगरीय भाषा में अनुवाद। इस मामले में वे कहती हैं कि अंग्रेजी में अनुवाद के बावजूद बांग्ला की अद्वितीय पहचान बनाए रखने की जरूरत है और एक समाज के तौर पर महानगरीय संस्कृति में नहीं मिलना है। उनका कहना है कि इस दृष्टिकोण को किसी भी उपेक्षित भारतीय भाषा से प्रभावी भारतीय भाषा में अनुवाद पर समान रूप से लागू किया जा सकता है। द्वितीय, स्पीवाक इसका उल्लेख करती हैं कि अनुवाद का मुद्दा भाषायी व्याकरण के संदर्भ में भी हो सकता है, अर्थात् भाषा संरचना तथा शब्दावली। अनुवाद की प्रक्रिया के दौरान मूल भाषा की भाषायी विशेषताएं बताना या दर्शाना महत्वपूर्ण हो सकता है, ताकि किसी भी दी हुई भाषा में भाषायी व्याकरण से जुड़ा हुआ संदेश या अर्थ अनुवाद की प्रक्रिया में खो न जाए। यहां तक कि इस मामले में भी स्पीवाक ने महाश्वेता देवी के बांग्ला में लेखन और उनके अनुवाद के उदाहरण का इस्तेमाल किया है। वे महाश्वेता देवी की कहानियों का जिक्र करती हैं, जिसमें बंगाल के उपेक्षित समुदाय के लोगों द्वारा इस्तेमाल किए जाने वाले शब्दों की भरमार है। इन शब्दों का इस्तेमाल उपेक्षित समुदाय के सामाजिक जीवन पर अभिजात्य वर्ग के वर्चस्व को चुनौती देने के लिए भाषायी व्याकरण के रूप में किया गया है। स्पीवाक कहती हैं कि चूंकि ये शब्द शक्तिशालियों की शक्ति के सम्बन्ध में मूल विषय वस्तु के भीतर प्रतिरोध का निर्धारण करते हैं, इसलिए वे यहां तक कि अनुवाद में भी प्रतिरोध को चिह्नित करने वाले के रूप में अद्वितीय हैं। स्पीवाक अनुवाद में इस तरह की भाषायी शब्दावलियों को प्रमुखता से दर्शाने के लिए तिरछे (इटेलिक) लेखन का इस्तेमाल करती हैं।

अनुवाद से सम्बन्धित स्पीवाक के दृष्टिकोण की तीसरी बड़ी विशेषता उनके लेखन में तिरछे शब्दों के इस्तेमाल में भी ढूंढी जा सकती है। अब तक हमने देखा है कि स्पीवाक भाषायी शब्दावली की अद्वितीयता अथवा उनके काम को दर्शाने के लिए तिरछे शब्दों का इस्तेमाल करती हैं। हालांकि, स्पीवाक एक अनुवादक के तौर पर तिरछे लेखन का इस्तेमाल महाश्वेता देवी के मूल पाठ की व्याख्या के लिए भी करती हैं। दूसरे शब्दों में, तिरछे लेखन

का इस्तेमाल केवल मूल पाठ में उपेक्षित कारकों को दर्शाने के लिए नहीं, बल्कि उन तरीकों को दर्शाने के लिए भी होता है, जिसमें अनुवादक अनुवाद के साथ-साथ मूल पाठ की व्याख्या भी कर रहे होते हैं। उदाहरणस्वरूप, हम देखेंगे कि कुछ शब्द या वाक्य हैं, जिसे स्पीवाक अपने पाठकों को यह बताने के प्रयास में तिरछा लिखती हैं कि इसका उल्लेख विशेष रूप से करने की जरूरत है। दूसरे शब्दों में, तिरछे में लिखे गए शब्द या वाक्य मूल पाठ में किसी मुद्दे से नहीं, बल्कि उस विषय से सम्बन्धित है जिसे अनुवादक एक साहित्यिक आलोचक के रूप में अनुवादित पाठ में शामिल करते हैं। इस प्रक्रिया में अनुवादक लेखक को माध्यम बनाने के बजाय (मूल पाठ के सम्बन्ध में) पाठक के साथ सीधा संचार स्थापित कर लेते हैं। अनुवादक की यह विशिष्ट भूमिका, जिसे स्पीवाक ने भारत में अनुवाद के सम्बन्ध में महसूस किया है, लॉरेंस वेनुती द्वारा अनुवाद अध्ययन के क्षेत्र में, यानी अनुवाद में अनुवादक की दृश्यता बनाम अदृश्यता के स्वरूप में छेड़ी गई बहस के व्यापक संदर्भ में भी देखी जा सकती है। अनुवादक की परम्परागत भूमिका, यानी अदृश्य होने, को चुनौती देते हुए वेनुती ने अनुवादक की दृश्यता की पुरजोर वकालत की है। वेनुती का तर्क है कि अनुवाद में विषय वस्तु जब 'घरेलू' अथवा स्वाभाविक होती है और इसका विदेशी उद्गम जब अदृश्य रहता है तो यह आदर्श अनुवाद समझा जाता है। वे कहते हैं कि अनुवाद की प्रकृति एवं भूमिका अनुवादक की विचारधारा एवं उसके सामाजिक संदर्भ से निर्धारित होती है। इसलिए अनुवादक के अध्ययन के जरिये ही अनुवाद को समझा जा सकता है। इस प्रकार अनुवाद में अपनी दृश्यता बनाने में अनुवादक का महत्व अनुवाद अध्ययनों का केन्द्र बिंदु है। इस संदर्भ में यह स्पष्ट है कि अनूदित पाठ में एक अनुवादक के रूप में स्पीवाक का दखल समसामयिक अनुवाद अध्ययनों में मौलिक योगदान है।

अनुवाद एवं मूल पाठ के सम्बन्ध में स्पीवाक का दृष्टिकोण अनुवाद अध्ययन में दो बड़ी बातों को ध्यान में रखता है जिस पर विशेषकर 1980 के दशक से जोर दिया गया। पहला मुद्दा यह कि अनुवाद केवल भाषायी प्रतिकृति नहीं उपलब्ध करवाता अपितु वह मूल पाठ का व्याख्याता भी है। दूसरा मुद्दा मूल पाठ की व्याख्या करने में अनुवादक की भूमिका है। इस प्रकार, स्पीवाक ने भारतीय अनुवाद के क्षेत्र में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। अनुवाद एवं आत्मसातीकरण को चुनौती के सवाल पर स्पीवाक का दृष्टिकोण कहता है कि अनुवाद में आत्मसातीकरण दो स्तरों पर हो सकता है : (क) मूलपाठ और लक्ष्य पाठ के बीच सम्बन्ध के स्तर पर और (ख) अनुवादक तथा अनुवाद में सम्बन्ध के स्तर पर। स्पीवाक के दृष्टिकोण का उदाहरण अनुवाद के अन्य मामलों में भी देखा जा सकता है। उदाहरण के लिए, लक्ष्मी होल्म्सट्रॉम ने बामा के तमिल पाठ के अपने अनुवाद में इसी दृष्टिकोण का अनुकरण किया है। बामा तमिल दलित नारीवादी लेखिका हैं। उनके उपन्यास संगति के अंग्रेजी अनुवाद की प्रस्तावना में होल्म्सट्रॉम ने लिखा है कि उपन्यास में बामा की नारीवादी दलित नीति के भाषायी व्याकरण को अनुवाद में भी बनाए रखने की जरूरत है। उनका तर्क है कि बामा का भाषायी व्याकरण उनकी नारीवादी दलित नीति का केन्द्र बिंदु है और इसलिए अंग्रेजी अथवा अन्य भाषाओं में इसका बिल्कुल समानांतर शब्द ढूंढना मुश्किल हो सकता है। अतः अनुवाद में बामा के भाषायी व्याकरण को बरकरार रखना और उनकी शब्दावली तैयार करना न केवल दिए गए पाठ, बल्कि उसकी नीति का भी बेहतर अनुवाद होगा। एक बार फिर हम देखते हैं कि अनुवाद का इस्तेमाल लक्ष्य संस्कृति में आत्मसातीकरण की प्रक्रिया के भाग के रूप में नहीं किया गया। इसके बजाय, इसका उद्देश्य मूल पाठ, इसकी संस्कृति तथा यहां तक कि लक्ष्य संस्कृति में भी संदर्भ की विशेषताओं पर जोर देना है।

7.2.4 मध्यस्थ के रूप में सामान्य भाषा की भूमिका

अब तक के अध्ययन में हमने दो भाषाओं में सीधे अनुवाद पर ध्यान केंद्रित किया है। उदाहरण के लिए, बांग्ला एवं असमी के बीच अनुवाद अथवा मराठी एवं मलयालम के बीच अनुवाद। दो भाषाओं में अनुवाद के सम्बन्ध में अनुवादक समतुल्यता के सिद्धांत या प्रतिरोध के सिद्धांत का इस्तेमाल करते हैं। इन सिद्धांतों को लागू करने की न्यूनतम अर्हता यह है कि अनुवादक दोनों भाषाओं, मूल भाषा और लक्ष्य भाषा को जानते हों। हालांकि भारत जैसे देश में, जहां कई भाषाएँ हैं, आम तौर पर कुछ चुनिंदा भाषाओं के सम्बन्ध में यह पाया जाता है कि अनुवादक दोनों भाषाएँ, मूल भाषा और लक्ष्य भाषा जानते हैं। इसलिए, यदि अनुवाद ऐसे अनुवादक द्वारा किया जाना हो जो मूल भाषा और लक्ष्य भाषा, दोनों को नहीं जानते तो अनुवाद करने के लिए सामान्य या सम्पर्क भाषा की मदद ली जाती है। भारत में ये दो सामान्य भाषाएँ आम तौर पर अंग्रेजी और हिन्दी हैं।

7.3 अनुवाद पद्धतियाँ और प्रकाशन उद्योग की भूमिका

पूर्व के अध्यायों में हमने अनुवाद की उन पद्धतियों के बारे में पढ़ा, जिसका इस्तेमाल आम तौर पर अनुवादक आधुनिक भारतीय भाषाओं के बीच अनुवाद में करते हैं। हमने यह भी पढ़ा कि अनुवादकों द्वारा अपने अनुवाद सम्बन्धी कार्यो में इन पद्धतियों का इस्तेमाल किस प्रकार सम्भव हो पाया। यह उन साझा विशेषताओं के संघटन के कारण सम्भव हो पाया जो भाषा एवं संस्कृति, दोनों के बीच लम्बे समय की लगातार अंतःक्रिया के परिणामस्वरूप विकसित हुआ। हमने अनुवादकों के दृष्टिकोण के बारे में भी पढ़ा, जिसमें वे अनुवाद के माध्यम से संस्कृति एवं शक्ति के बीच सम्बन्ध में प्रतिरोध के अपने सिद्धांत को दर्ज कराना चाहते हैं। अंत में, हमने अनुवाद के लिए एक साधन के रूप में इस्तेमाल होने वाली सामान्य भाषा की भूमिका के बारे में पढ़ा। इन सभी उपागमों में आपने देखा होगा कि हमने अनुवादक की स्थिति एवं अनुवाद की उसकी पद्धति पर उस समय के प्रभाव के संदर्भ में, जिसका वह हिस्सा रहा हो, चर्चा की। हालांकि अनुवादक उस संगठन से भी प्रभावित हो सकते हैं, जो अनुवाद पाठ प्रकाशित करता है। इसलिए, इस खंड में हम आधुनिक भारतीय भाषाओं में अनुवाद की पद्धति तय करने में प्रकाशन उद्योग द्वारा निभाई जाने वाली या जा सकने वाली भूमिका पर चर्चा करेंगे।

इस सम्बन्ध में प्रकाशन उद्योग की भूमिका को हम तीन श्रेणियों में विभाजित कर सकते हैं। पहला, प्रकाशन उद्योग अनुवाद किए जा सकने वाले पाठ तथा उसके लिए अनुवादक की पहचान करने में भूमिका निभाता है। दूसरा, प्रकाशन उद्योग अनुवादकों को प्रशिक्षण देने में भूमिका निभाता है। उदाहरणस्वरूप, बहुत से संगठन अनुवादकों को प्रशिक्षण देने के लिए कार्यशाला या प्रशिक्षण कार्यक्रम संचालित करते हैं। अनुवाद प्रशिक्षण में अनुवादक को अनुवाद की सैद्धांतिक रूपरेखा बताई जाती है। साथ ही व्यावहारिक सत्र भी होता है, जिसमें सैद्धांतिक सत्र में बताई गई अवधारणा के आधार पर अनुवाद किया जाता है। इस तरह के प्रशिक्षण का उद्देश्य यह है कि अनुवादक को केवल भाषा ज्ञान का कौशल नहीं होना चाहिए, बल्कि उसे अनुवाद के विभिन्न उपागमों की भी समझ होनी चाहिए। हम अपने पहले पाठ्यक्रम (अनुवाद सिद्धांत) में पढ़ चुके हैं कि अनुवाद का उद्देश्य किस प्रकार अनुवाद पद्धति के चयन को प्रभावित कर सकता है। जब हम इसे समतुल्यता एवं प्रतिरोध के सिद्धांत के संदर्भ में देखते हैं, जिनके बारे में हम इस इकाई की शुरुआत में चर्चा कर चुके हैं, तो पाते हैं कि इस तरह के प्रशिक्षण कार्यक्रम का उद्देश्य अनुवादक में यह निर्णय लेने की क्षमता विकसित करना है कि अनुवाद करने के लिए किस सिद्धांत को अपनाया जाए। ऐसी भी कार्यशाला अथवा प्रशिक्षण कार्यक्रम हैं, जिनका उद्देश्य अनुवादक को न केवल प्रशिक्षण देना, बल्कि उसी कार्यक्रम में अनूदित पाठ तैयार करना भी होता है। इस प्रकार, एक ही समय में अनुवादक का प्रशिक्षण और पाठ का अनुवाद भी हो जाता है। तीसरा, प्रकाशन उद्योग अनूदित पाठ को बाजार में प्रचारित करने अथवा वितरित करने में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। हम जानते हैं कि एक ही मूल पाठ के कई अनुवाद होते हैं और उनमें से कुछ दूसरों की तुलना में अधिक लोकप्रिय होते हैं। यह प्रकाशन उद्योग ही है जो वितरण एवं बिक्री तथा समीक्षा के सर्वेक्षण की प्रक्रिया के द्वारा तय करता है कि कौन सा अनुवाद दूसरों की तुलना में अधिक लोकप्रिय है। प्रकाशन उद्योग यह भी तय करता है कि अनूदित पाठ की कौन सी शैली दूसरों की तुलना में अधिक लोकप्रिय है। यह सर्वेक्षण एवं जानकारी पर आधारित होता है। अनुवाद के पाठ और अनुवाद की पद्धति का निर्णय अनुवादक तथा प्रकाशक के बीच होता है। संक्षेप में, यह स्पष्ट है कि अनुवाद की पद्धति के बारे में निर्णय लेना केवल अनुवादक पर निर्भर नहीं करता। इस सम्बन्ध में प्रकाशन उद्योग महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

7.4 सारांश

इस इकाई में हमने आधुनिक भारतीय भाषाओं में अनुवाद के लिए इस्तेमाल होने वाली पद्धतियों की रूपरेखा तय करने की कोशिश की। हमने उन ऐतिहासिक कारणों को भी दर्शाने की कोशिश की है, जिनकी वजह से अनुवाद में इन पद्धतियों का इस्तेमाल होता है। इस इकाई में हमने दो अन्य मुद्दे उठाए हैं। ये हैं आधुनिक भारतीय भाषाओं के बीच अनुवाद में सामान्य भाषा की मध्यस्थता की महत्वपूर्ण भूमिका और अनुवाद के लिए पाठ तथा अनुवाद पद्धति के निर्धारण में प्रकाशन उद्योग की भूमिका।

7.5 अभ्यास के लिए प्रश्न

1. भाषा के दो उदाहरण बताएं जिनमें सांस्कृतिक अंतःक्रिया के कारण भाषायी परिवर्तन हुए। उन दो भाषाओं में परिवर्तन का भी उल्लेख कीजिए।
2. आधुनिक भारतीय भाषाओं में अनुवाद के संदर्भ में समतुल्यता तथा रूपांतरण के बीच सम्बन्ध के दो कारकों का उल्लेख कीजिए।
3. आधुनिक भारतीय भाषाओं के बीच अनुवाद में समतुल्यता के सिद्धांत और प्रतिरोध के सिद्धांत में अंतर सम्बन्धी तीन विशेषताओं का उल्लेख कीजिए।
4. आधुनिक भारतीय भाषाओं के बीच अनुवाद में सामान्य भाषा के रूप में महत्वपूर्ण भूमिका निभाने वाली दो भाषाएँ कौन सी हैं? कम से कम दो विशेष भूमिकाओं के बारे में बताइए जिससे वे अनुवाद में मदद देती हैं।
5. तीन प्रक्रियाओं की चर्चा कीजिए, जिनके माध्यम से प्रकाशन उद्योग अनुवाद पद्धति को प्रभावित करता है।

7.6 कुछ उपयोगी पुस्तकें

- Catford, J.C., *A Linguistic Theory of Translation,* London: Oxford University Press.
- Nida, E.A and Taber, E.J., *The Theory and Practice of Translation: Brill,* Leiden.
- Bassnett, Susan, 1980, *Translation Studies,* London & Newyork: Routledge.
- Baker, Mona.(ed.) 1998, *Routledge Encyclopedia of Translation Studies,* London:Routledge.
- Venuti, Lawrence (ed.), 2000, *The Translation Studies Reader,* London:Routledge

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY